Con. 3. X.5.49
320

अंक 10
संख्या 5

बुधवार
12 अक्तूबर
सन् 1949 ई.

भारतीय संविधान सभा

के

वाद-विवाद

की

सरकारी रिपोर्ट

(हिन्दी संस्करण)

विषय-सूची

पृष्ठ

संविधान का मसौदा–(जारी) 2883-2971
[द्वितीय अनुसूची और भाग 6-क पर विचार]

भारतीय संविधान सभा

बुधवार, 12 अक्तूबर, 1949

भारतीय संविधान-सभा कांस्टिट्यूशन हाल नई दिल्ली, में प्रातः 10 बजे अध्यक्ष महोदय (माननीय डॉ. राजेन्द्र प्रसाद) के सभापतित्व में समवेत हुई।

संविधान का मसौदा–(जारी)

द्वितीय अनुसूची–(जारी)

***माननीय डॉ. बी.आर. अम्बेडकरः** (बम्बईः जनरल): अध्यक्ष महोदय, द्वितीय अनुसूची के उपबंधों की व्याख्या के रूप में मैं एक बात कहना चाहूंगा और मैं उस भाग से आरम्भ करूंगा जो न्यायाधीशों के वेतन के संबंध में है।

सर्व प्रथम उच्चतम न्यायालय के संबंध में यह देखा गया होगा कि इस संविधान के आरम्भ पर उच्चतम न्यायालय के मुख्य न्यायाधिपति का वेतन 5000/- रुपया मासिक और मकान मुफ्त तथा छोटे न्यायाधीश का वेतन 4000/- रुपया मासिक और मकान मुफ्त होगा। उच्चतम न्यायालय के संबंध में स्थिति यह है कि संविधान के अनुसार किसी फेडरल न्यायालय के न्यायाधीश को जो उच्चतम न्यायालय का न्यायाधीश होना चाहता है उच्च्तम न्यायालय का न्यायाधीश नियुक्त किया जायेगा। अतः फेडरल न्यायालय का कोई न्यायाधीश यदि उच्चतम न्यायालय का न्यायाधीश होना चाहता है तो जो प्रश्न उठता है वह यह है: क्या उसे वह वेतन मिले जो उच्चतम न्यायालय के न्यायाधीशों के लिये संविधान के अधीन नियत किया गया है अथवा उसको वही वेतन लेते रहने के लिये कोई उपबन्ध बनाया जाये जो उसे फेडरल न्यायालय के न्यायाधीश के रूप में इस समय मिलता है। मसौदा समिति का विनिश्चय यह है कि यद्यपि उच्चतम न्यायालय के न्यायाधीशों का सामान्य वेतन तो वही होना चाहिये जो द्वितीय अनुसूची में दिया हुआ है, परन्तु यदि फेडरल न्यायाधीश उच्चतम न्यायालय के न्यायाधीश होना चाहें तो उन्हें इस समय जितना वेतन मिल रहा है उतना वेतन प्राप्त करने के लिये उपबन्ध होना चाहिये। इस प्रयोजन के लिये फेडरल न्यायालय के न्यायाधीशों को दो श्रेणियों में विभक्त किया गया है—एक वे जिनको स्थायी न्यायाधीशों के रूप में 31 अक्तूबर, 1948 के पूर्व नियुक्त किया गया था और दूसरे वे जिनको 31 अक्तूबर, 1948 के बाद नियुक्त किया गया है। प्रथम श्रेणी के न्यायाधीश, अर्थात् वे जिनको 31 अक्तूबर, 1948 के पूर्व नियुक्त किया गया है उनको स्वीय वेतन मिलेगा जो द्वितीय अनुसूची द्वारा नियत किये गये वेतन और उस वेतन के अन्तर के बराबर होगा जो ऐसे न्यायाधीश को इस संविधान के आरम्भ के ठीक पहले दिया जाता था। जिनकी नियुक्ति

[माननीय डॉ. बी.आर. अम्बेडकर]

31 अक्तूबर, 1948 के पश्चात् हुई है उनको द्वितीय अनुसूची में नियत किये गये हिसाब से वेतन मिलेगा। अत: उच्चतम न्यायालय के मुख्य न्यायाधिपति को संविधान के अधीन नियत किये गये वेतन से 2000/- रुपया अधिक मिलेगा और फेडरल न्यायालय के छोटे न्यायाधीशों को, यदि वे उच्चतम न्यायालय में जाना चाहते हैं तो छोटे न्यायाधीशों के लिये नियत किये गये सामान्य वेतन से 1500/- रुपया अधिक मिलेगा।

उच्च न्यायालय के मुख्य न्यायाधिपति के लिये इस संविधान के अधीन नियत किया गया सामान्य वेतन 4000/- रुपया है और छोटे न्यायाधीशों का सामान्य वेतन 3500/- रुपया है। इसके लिये भी संविधान में हमने एक उपबन्ध रखा है कि उच्च न्यायालय का कोई न्यायाधीश इस संविधान के अधीन उच्च न्यायालय का न्यायाधीश नियुक्त होना चाहता है तो राष्ट्रपति को उसे नियुक्त करना पड़ेगा। परिणाम स्वरूप उच्चतम न्यायालय के संबंध में जो समस्या खड़ी होती है वही उच्च न्यायालय के संबंध में भी खड़ी होती है क्योंकि जो न्यायाधीश इस समय वर्तमान हैं उनमें से कुछ को उससे अधिक वेतन मिल रहा है जो द्वितीय अनुसूची में नियत किया गया है। अत: किसी तरह की भी शिकायत को दूर करने के लिये यह भी विनिश्चित किया गया है कि उसी प्रक्रिया का पालन किया जाये जिसका फेडरल न्यायालय के संबंध में पालन किया गया है और वह यह कि न्यायाधीशों को दो श्रेणियों में विभक्त किया जाये—एक वे जिनको 31 अक्तूबर, 1948 के पूर्व नियुक्त किया गया था और दूसरे वे जिनको उसके पश्चात् नियुक्त किया गया था। इस प्रकार जो प्रथम श्रेणी में हैं उनको स्वीय वेतन के रूप में अतिरिक्त वेतन मिलेगा जो उन दोनों वेतनों के अन्तर के बराबर होगा जो संविधान द्वारा नियत किया गया है और जो वे पा रहे हैं। जो द्वितीय श्रेणी में आते हैं उनको वही वेतन मिलेगा जो संविधान द्वारा नियत है।

शायद इस बात की व्याख्या करना आवश्यक है कि हमने 31 अक्तूबर, 1948 से श्रेणियों के दो भाग क्यों किये हैं। इसका उत्तर यह है कि भारत सरकार ने विभिन्न उच्च न्यायालयों और फेडरल न्यायालय को अधिसूचित किया था कि 31 अक्तूबर, 1948 के पूर्व नियुक्त किये गये किसी भी न्यायाधीश को वही वेतन मिलते रहेंगे जो उसे मिलते थे परन्तु 31 अक्तूबर, 1948 के बाद नियुक्त हुये न्यायाधीशों को यह आश्वासन नहीं दिया जा सकता है। यह कहना चाहिये कि इस आश्वासन की प्रत्याभूति करने के लिये यह विभाजन रेखा पुर:स्थापित की गई है।

अनुसूची 2 में नियत किये गये वेतनों और अन्य देशों में के वेतनों के संबध में मैं एक दो बातें कहना चाहूंगा। उदाहरणार्थ संयुक्त राज्य अमरीका में मुख्य न्यायाधिपति को 7084/- रुपया मासिक मिलता है और छोटे न्यायाधीशों को 6958/- रुपया। कनाडा में मुख्य न्यायाधिपति को 4584/- रुपया और छोटे न्यायाधीशों को 3662/- रुपया मिलता है। आस्ट्रेलिया में उच्च न्यायालय के मुख्य न्यायाधिपति को 3750/- रुपया और छोटे न्यायाधीशों को 3333/- रुपया मिलता है और दक्षिणी अफ्रीका में मुख्य न्यायाधिपति को 3892/- रुपया और छोटे न्यायाधीशों को 3611/- रुपया मिलता है। अनुसूची 2 में जो वेतन स्तर हमने निश्चित किया है उसकी तुलना यदि कोई व्यक्ति उन अंकों से करे जो मैंने बताये हैं तो मैं समझता हूं

कि वह यह अनुभव करेगा कि सिवा संयुक्त राष्ट्र अमरीका के अन्य देशों में ऐसे ही कार्यकर्त्ताओं के लिये जो वेतन नियत हैं उसकी तुलना में हमारे यहां के वेतन कहीं ज्यादा हैं।

इन वेतनों के नियत करने में हमें जितना न्याय करना चाहिये उतना न्याय हमने किया है। उदाहरणार्थ मसौदा समिति को यह कहने का पूर्ण अधिकार था कि इस नियम का पालन करते हुए कि जिनकी नियुक्ति 31 अक्तूबर, 1948 से पहले हुई थी यदि उनका वेतन इस संविधान द्वारा नियत किये गये सामान्य वेतन से अधिक है तो वह कम हो जायेगा, हम ऐसा उपबन्ध भी बना सकते थे कि नागपुर उच्च न्यायालय के न्यायाधीशों को सामान्य वेतन से कम वेतन मिलेगा क्योंकि उनका वर्त्तमान वेतन सामान्य वेतन से कम है। पर हम कोई ऐसी शिकायत का कारण नहीं रखना चाहते हैं और इसलिये हमने कोई ऐसा समझौते का उपबन्ध नहीं रखा है जिसे रखने में मसौदा समिति इस विषय के प्रति कोरे न्याय की दृष्टि से न्याययुक्त हो सकती थी। अत: मैं निवेदन करता हूं कि जहां तक न्यायपालिका के वेतन का संबंध है शिकायत करने का कोई अवसर नहीं है।

अब मैं राष्ट्रपति के विषय पर आता हूं। यह स्पष्ट है कि संघ का राष्ट्रपति एक ऐसा कृत्यकारी है जो वर्तमान गवर्नर जनरल का स्थानापन्न होगा और उसका जो वेतन हमने नियत किया है उसके नियत करने में अर्थात् 10,000/- रुपये और इस परिणाम पर पहुंचने में हमें यह यह विचार करना पड़ा कि वह उस वेतन से कम है या ज्यादा जो गवर्नर जनरल को मिल रहा है।

जैसा कि सबको विदित है भारत शासन-अधिनियम, 1935 के अधीन गवर्नर जनरल का वेतन 250800/- रुपये वार्षिक नियत किया गया था जो 20,900/- रुपया मासिक होता है। इसमें सन्देह नहीं कि इस वेतन पर आय कर लगता था। विधान सभा द्वारा पारित अभी हाल के अधिनियम के अधीन गवर्नर जनरल का वेतन 5500/- रुपये नियत किया गया था पर इस वेतन पर आय कर न था। मुझे बताया गया है कि यदि गवर्नर जनरल के वेतन पर आय कर लगता है तो वह 14,000/- रुपये के लगभग होता। राष्ट्रपति का वेतन 10,000/- रुपये नियत करने में हमने दो बातों पर विचार किया है। एक बात यह है कि राष्ट्रपति के वेतन पर आय कर लगना चाहिये। मसौदा समिति द्वारा तथा इस सभा के अधिकांश सदस्यों द्वारा भी यह अनुभव किया गया कि कोई भी व्यक्ति जो इस संविधान के अधीन कृत्यकारी है अथवा इस संविधान के अधीन असैनिक सेवक है वह किसी ऐसे दायित्व से मुक्त न हो जिसका आरोपण किसी कर संबंधी उपक्रम द्वारा इस देश के जन साधारण पर किया जाता है। अत: हमने यह सोचा कि यदि यह राष्ट्रपति के वेतन पर आय कर लगाना चाहते हैं तो उसकी वृद्धि करना वांछनीय है।

इस बात का एक और कारण कि हमने 10,000/- रुपया नियत क्यों किया है और वह कारण उच्चतम न्यायालय के वर्तमान मुख्य न्यायाधिपति का वेतन है जो 7000/- रुपया है। मसौदा समिति का यह विचार हुआ कि चूंकि राष्ट्रपति राज्य में सर्वोच्च कृत्यकारी है इसलिये ऐसा कोई अन्य व्यक्ति नहीं होना चाहिये जिसे

[माननीय डॉ. बी.आर. अम्बेडकर]

राष्ट्रपति से अधिक वेतन मिले और यदि उच्चतम न्यायालय के मुख्य न्यायाधिपति को 7000/- रुपया वेतन मिलता है तो यह नितांत आवश्यक है कि उपरोक्त दृष्टिकोण से राष्ट्रपति का वेतन मुख्य न्यायाधिपति के वेतन से कुछ अधिक होना चाहिये। इन सब बातों पर विचार करते हुए हमने सोचा कि राष्ट्रपति का ठीक-ठीक वेतन 10,000/- रुपया ही होगा।

इसके पश्चात् बात यह है कि राष्ट्रपति के वेतन के साथ कुछ भत्ते रहते हैं। इन भत्तों के संबंध में मैं यह कहूंगा कि जब भारत शासन अधिनियम, 1935 पारित किया गया था तो उस अधिनियम में गवर्नर जनरल का केवल वेतन नियत किया गया था। भत्तों के संबंध में उस अधिनियम में यह कहा गया था कि उसे सपरिषद् सम्राट आदेश द्वारा नियत करेंगे, परन्तु दुर्भाग्यवश भारत शासन अधिनियम, 1935 का दूसरा भाग कभी प्रवृत्त नहीं हो पाया और यद्यपि इस आदेश का मसौदा सन् 1937 में तैयार तो कर लिया गया पर सपरिषद् सम्राट द्वारा वह आदेश कभी नहीं निकाला गया। अत: जहां तक भारत शासन अधिनियम का संबंध है उसमें भत्तों के संबंध में कुछ भी नहीं कहा गया है और इस कारण किसी निश्चित परिणाम पर पहुंचने के लिये उस अधिनियम से मसौदा समिति को कोई आधारभूत सामग्री न मिली। परिणामत: मसौदा समिति ने यह उपबन्ध कर इस विषय को समाप्त किया कि राष्ट्रपति को वही भत्ते मिलते रहेंगे जो गवर्नर जनरल को इस संविधान के आरम्भ पर मिलते थे। बाद में संसद इस बात के अधीन राष्ट्रपति के वेतन और भत्तों में परिवर्तन कर सकती है कि उनमें सम्बद्ध राष्ट्रपति की पदावधि में परिवर्तन नहीं होगा।

यदि मसौदा समिति द्वारा सुझाया गया यह उपबन्ध, कि गवर्नर जनरल को इस संविधान के आरम्भ पर दिये जाने वाले भत्ते राष्ट्रपति को मिलते रहें, प्रवृत्त होता है तो मैं सभा को उन भत्तों का कुछ अनुमान कराना चाहूंगा जिनके मिलने का हक राष्ट्रपति को होगा।

1949-50 के आनुमानिक आय-व्यय के ब्यौरे से मुझे यह विदित हुआ है कि "गवर्नर जनरल के भत्ते" शीर्षक के अन्तर्गत यह अंक थे:

1-सम्पट्यूरी भत्ता 45,000 रुपया वार्षिक।

2-संविदा भत्ते का व्यय 4,65,000 रुपया।

3-राज्य की सवारी; मोटर गाड़ी: 73,000 रुपया।

4-दौरे का व्यय 81,000 रुपया।

1949-50 के बजट के अनुमान के अनुसार कुल भत्ते मिलाकर 6,64,000/- रुपये होते हैं।

जैसा कि मैं कह चुका हूं भत्तों के बारे में मेरा अधिक कुछ कहना आवश्यक नहीं है क्योंकि भत्तों में संसद द्वारा किसी समय भी परिवर्तन किया जा सकता है। महत्वपूर्ण प्रश्न वेतन के बारे का है और मैं निवेदन करता हूं कि जिन

परिस्थितियों का मैंने उल्लेख किया है उन पर ध्यान रखते हुए मुझे तथा मसौदा समिति को भी 10,000/- रुपया राष्ट्रपति के वेतन के रूप में एक बहुत ही ठीक-ठीक राशि प्रतीत होती है।

राज्यपालों के वेतन के बारे में मुझे कुछ अधिक नहीं कहना है। उसको अभी-अभी गवर्नर जनरल द्वारा निकाले गये आदेश द्वारा नियत किया गया है और वह मुझे बहुत ही युक्तियुक्त प्रतीत होता है और उसमें भी उसी सिद्धांत का पालन किया गया है कि प्रांतों में अधिकतम वेतन पाने वाला पदाधिकारी मुख्य न्यायाधिपति है, राज्यपाल को प्रांत के मुख्य न्यायाधिपति से कुछ अधिक मिले। इस दृष्टिकोण से राज्यपालों के वेतन नियत किये गये हैं।

एक और उपबन्ध जिसकी ओर मैं निर्देश करना चाहूंगा वह यह है कि इस अनुच्छेद के मूल मसौदे में नियंत्रक-महालेखा परीक्षक के वेतन के संबंध में किसी उपबन्ध का रखना प्रस्थापित नहीं किया गया था। यहां फिर अनुसूची 2 के द्वारा उसका वेतन 4000/- रुपया नियत किया गया है, पर यह वेतन इस परन्तुक के अधीन है कि जब तक वर्तमान पदधारी नियंत्रक-महालेखा परीक्षक के रूप में कार्य करेगा उसे अनुसूची 2 द्वारा नियत किये गये वेतन तथा जो वेतन इस समय मिल रहा है इन दोनों वेतनों का अन्तर स्वीय वेतन के रूप में मिलेगा। जब यह पदधारी चला जायेगा और दूसरा नियुक्त किया जाएगा तो उसे वही वेतन मिलेगा जो अनुसूची 2 में नियत है।

मैं आशा करता हूं कि इस अनुसूची में दिये हुये विभिन्न कृत्यकारियों के लिये मसौदा समिति द्वारा जो वेतन सुझाये गये हैं वे सभा को स्वीकार होंगे।

***अध्यक्ष:** अब मैं संशोधनों पर आता हूं। मैं भिन्न-भिन्न भागों को पृथक-पृथक लूंगा और जिस भाग को मैं लूंगा उससे संबंधित संशोधनों को पेश करने के लिये मैं सदस्यों से निवेदन करूंगा। प्रथम संशोधन भाग 1 पर है, श्री महावीर त्यागी का संशोधन संख्या 259।

***श्री महावीर त्यागी** (संयुक्त प्रान्त: जनरल): श्रीमान जी, मुझे यह दस हजार रुपये मासिक तनख्वाह प्रेसीडेंट की और पांच हजार रुपये मासिक गवर्नर की होने में एतराज नहीं है कि तनख्वाह ज्यादा है। लेकिन बराबर दो रोज तक विचार करने के बाद मैंने यह तय किया कि अपनी आजाद राय को इस मौके पर जरूर अंकित कर देना चाहिये। मैं इस बात में यकीन रखता हूं कि जो सिविल सर्विस वाले हैं और जो सरकारी कर्मचारी हैं उन तमाम का रहन-सहन अच्छा होना चाहिये, उनकी इज्जत भी होनी चाहिये। लेकिन यह भारत भूमि ऋषियों की भूमि है। यहां पर साधारणतया रुपये के द्वारा कोई इज्जत या डिगनिटी नहीं गिनी जाती है (*हियर हियर*)। हिंदुस्तान के अन्दर हमेशा से त्याग और तपस्या की इज्जत रही है। जो सरकारी कर्मचारी मुस्तकिल रूप से स्थाई रूप से सेवा का भार अपने सिर पर लिये हैं उनकी तनख्वाह, उनका वेतन, इतना होना चाहिये जिससे जीवन भर वह आराम से और इज्जत के साथ अपनी जरूरतों को पूरा कर सकें, लेकिन जो लोग राजनीतिक नेता हैं जिनमें मैं गवर्नरों और प्रेसीडेंट को गिनता हूं और जिनमें असेम्बली के मेम्बरों को भी गिनता हूं और जो लोग राजनीति के कारण सरकार के ऊंचे पदों पर आते हैं उनके लिये मैं ऊंचा आदर्श यही समझता हूं कि वे त्याग की

[श्री महावीर त्यागी]

भावना से इस कार्य को करें। दुनियां भर में बड़ी-बड़ी तनख्वाहें देने का रिवाज है और इसलिये हमें बड़ी तनख्वाहें रखने में कोई लाज नहीं आती है। पर मैं यह कहूंगा, और कांस्टीट्यूएंट असेम्बली से यह अपील करता हूं कि एक नया तरीका हम शुरू करें त्याग का ताकि दुनियां भर को सबक दे सकें और दुनियां का नेतृत्व कर सकें। हमारी कामयाबी जो आजादी हासिल करने में हुई है वह रुपये द्वारा बड़ापन प्राप्त करने से नहीं, बल्कि त्याग के द्वारा हुई है। इस वक्त विशेष रूप से जब कि सारी दुनियां का नैतिक जीवन गिर रहा है उस समय में और भी आवश्यक है कि यह भारतवर्ष दुनियां का नेतृत्व करे और एक आदर्श स्थापित करे, इस बात का, कि त्याग के कारण राष्ट्र की सेवा किस तरह से हो सकती है। अपने त्याग और तपस्या के जरिये से हम लोग केवल अपने ही देश में नहीं बल्कि दुनियां भर में त्याग की भावना पैदा करेंगे। समाज त्याग ही का नतीजा है और समाज को ऊंचा करने के लिये त्याग की भावनाओं को बढ़ाना, उनको जाग्रत करना बहुत आवश्यक है। मैं समझता हूं कि एक राष्ट्र का राष्ट्रपति उस राष्ट्र की इज्जत का प्रतीक है जो आजकल हमारा ख्याल है कि हमारी इज्जत और डिगनिटी और प्रतिष्ठा सारी रुपये के द्वारा होती है, मेरे ख्याल में हिन्दुस्तान के अन्दर यह गलत है (*हियर हियर*)। यहां तो यह पद त्याग ही से प्राप्त है। मेरे अपने स्वप्न के अनुसार तो प्रेसीडेंट आनरेरी (अवैतनिक) रहना चाहिये (*हियर हियर*) और उसका जितना भी खर्चा हो उसको स्टेट बर्दाश्त करे और उसके हाथ में हमारे राष्ट्र का सबसे बड़ा पद हो, उसका जीवन एक सन्यासी के जीवन की तरह सादा होना चाहिये। यह गरीबों का देश है और गरीबों से जो रुपये वसूल किया जाता है करों द्वारा, उससे गरीबों की गरीबी और बढ़ती है। उस रुपये की राजनीतिक लोग आजादी के साथ अपने निजी कार्यों में इस्तेमाल करें यह मुझे स्वीकार नहीं है। मैं इसलिये आपके सामने यह अपना संशोधन रखता हूं कि अगर और कोई तबदीली इस समय नहीं हो सकती तो कम से कम इतनी कर दी जाए कि "राष्ट्रपति का वेतन दस हजार से अधिक नहीं होगा।" बजाय इसके कि दस हजार निश्चित किया जाए यह अच्छा है कि हम यह कर दें कि दस हजार से अधिक नहीं होगा और गवर्नरों का वेतन पांच हजार से अधिक नहीं होगा ताकि आयन्दा आने वाली पार्लियामेंट अगर यहां की राजनीति को त्याग और तपस्या की राह पर चलाना चाहे तो इन राशियों को कम कर सकें। मेरे स्वप्न के अनुसार तो असेम्बली के मेम्बरों को भी केवल खाने पीने और सरकारी खर्च के अलावा और कुछ नहीं मिलना चाहिये। और मेरा विश्वास है कि यदि इस तरह की प्रणाली हम देश में कायम करेंगे तो अवश्य ही देश में सादगी और ईमानदारी का संचार होगा और जो नैतिक पतन दुनियां में हो रहा है उस गिरती हुई हालत को हम रोक सकते हैं। जो वैतनिक सरकारी पदाधिकारी स्थायी पदाधिकारी हैं उनकी तख्नवाह में मुझे कोई आपत्ति नहीं है जैसी देश की दशा है उसके अनुसार उनकी तनख्वाहें बढ़ती जायें। परन्तु जिन लोगों ने देश के गरीब आदमियों का विश्वास प्राप्त किया है, गांधी जी के आदर्श के अनुसार उनको गरीबी के साथ रहना चाहिये। यदि दूसरे देशों के बड़े राष्ट्रपतियों के साथ भी भेंट करें तो हमारी शान इसी में है कि हम लोग गरीबी के साथ उनसे बातचीत करें और आत्म विश्वास और गौरव के साथ अपनी राजनीति को चलायें। मुझे और इस पर कोई ज्यादा बात नहीं कहनी। केवल मैं अपना यह संशोधन पेश करता हूं और यह अपील करता हूं कि यह राष्ट्र चूंकि बहुत गरीब है इसलिये यहां के राष्ट्रपति को बहुत गरीबी के साथ रहना चाहिये ताकि वह गरीबों की तरफ ज्यादा तवज्जह कर सकें।

एक बात मुझे और कहनी है। जब कभी रुपये पैसे और राजनीति सत्ता दोनों का जमाव एक जगह केन्द्रित हो जाता है तो निश्चय ही उस केन्द्र के चारों ओर करप्शन और गिरावट इकट्ठी होने लगती है। लोग उस अधिकारी के यहां खुशामद के लिये आने लगते हैं और जो राजनीति का असली केन्द्र है उसके चारों तरफ गिरावट और पतन का किला-सा बन जाता है और फिर उस किले की हिफाजत के लिये दरबारी लोग उस राजनीति के केन्द्र को उठने नहीं देते और न कोई रिफार्म होने देते हैं। क्योंकि उस रिफार्म से डर यह है कि वह रिफार्म उनके आनन्द को भी खराब न कर दे। इस तरह उसमें गिरावट की प्रवृत्ति बढ़ती जाती है। हमें अपने राष्ट्रपति को उच्च आदर्शों से सुसज्जित करना चाहिये। उसे रुपये से सुसज्जित करने से देश के अन्दर आदर नहीं हो सकता। इसलिये मेरी अपील है कि हमारे राष्ट्रपति बिना किसी वेतन के काम करें और गरीबी के साथ जीवन बितायें। इसी में देश का ज्यादा कल्याण हो सकता है और गरीबों से अपनावट हो सकती है।

इतना कह कर मैं अपना यह संशोधन पेश करता हूं।

***प्रो. शिब्बन लाल सक्सेना** (संयुक्त प्रान्त: जनरल): अध्यक्ष महोदय, मैं प्रस्ताव पेश करता हूं:

> "कि सूची 6 (द्वितीय सप्ताह) के संशोधन संख्या 207 में प्रस्थापित भाग 1 की कंडिका 1 में '10,000 rupees' (10,000 रुपये) शब्द और अंकों के स्थान में '1 rupee' (1 रुपया) शब्द और अंक रखे जायें।"

श्रीमान, मुझे खुशी है कि मेरे माननीय मित्र श्री त्यागी ने अपना भाषण अपने संशोधन पर नहीं वरन मेरे संशोधन पर दिया है। मुझे खुशी है कि अपने संशोधन द्वारा जिन भावनाओं को मैं व्यक्त करना चाहता था वैसी भावनाऐं उनकी तथा इस सभा के सदस्यों की भी हैं जो सभा में उनके भाषण पर तालियां बजाने से स्पष्ट हो चुकी हैं। 'जब मैंने यह संशोधन भेजा था तो मुझे वास्तव में बड़ी हिचकिचाहट थी। मुझे ऐसा अनुभव हो रहा था कि जो कुछ मेरे मन मैं है उसे मुझे अपने संशोधन में व्यक्त कर देना चाहिये। हमारे संविधान में गणराज्य का राष्ट्रपति ब्रिटेन के बादशाह का स्थानापन्न है क्योंकि हमने ब्रिटेन के आधार पर अपना संविधान बनाया है। हमारे देश में राजत्व के आदर्श का उदाहरण जनक जैसे राजाओं का मिलता है जो सन्यासी के समान रहते थे। हमारे समय में भी हमारे स्वामी, हमारे पिता महात्मा गांधी ने वही आदर्श हमारे सामने रखा था। अत: श्रीमान, मैं समझता हूं कि राष्ट्रपति के लिये वेतन स्वरूप 1 रुपये का उपबन्ध करके हम एक ऐसा कार्य करेंगे जो हमारी प्राचीन सभ्यता और संस्कृति के अनुरूप है। अत: इस संशोधन को स्वीकार करके हम अपनी प्राचीन सभ्यता और संस्कृति का आदर्श विश्व तथा देश के समक्ष रखेंगे। इसके कारण हमें यह भी सुनिश्चयन हो जायेगा कि लोभी व्यक्ति राष्ट्रपति के पद की आकांक्षा नहीं करेंगे बल्कि यह सम्मान केवल उन्हीं लोगों को दिया जायेगा जो इस पद के लिये बौद्धिक, नैतिक तथा आध्यात्मिक रूप से योग्य हैं और जो उसके वेतन के कारण उसे स्वीकार नहीं करना चाहते हैं बल्कि जो राजा जनक, महात्मा गांधी और प्राचीन भारत के अन्य महान राजाओं के सदृश्य देश की सेवा करना चाहते हैं।

अपने संविधान में हमने राष्ट्रपति को बड़ी व्यापक शक्तियों से सुसज्जित किया है। अनुदेशों की लिखतें वाली मूल मसौदे की अनुसूचियां 3 (क) और 4 संविधान

[प्रो. शिब्बन लाल सक्सेना]

से निकाल ली गई हैं। अत: अब संविधान किसी प्रकार से भी उसके स्वविवेक में बाधा नहीं डालता है। हमारे संविधान में राष्ट्रपति को जैसा चाहे वैसा करने का प्राधिकार है। हमने उसको बड़ी महान शक्तियां दे दी हैं। इन समस्त वादविवादों में उस पर इन सब शक्तियों के लादने का मैं विरोध करता रहा क्योंकि वास्तव में इन सब शक्तियों का प्रयोग वह मंत्रिमंडल की मंत्रणा के अनुसार करेगा, परन्तु यदि राष्ट्रपति सन्यासी है तो मुझे विश्वास है कि किसी प्रधान मंत्री में उसे सही मार्ग से विचलित करने का साहस नहीं होगा और वह निष्पक्ष रूप से अपने कर्तव्यों का पालन कर सकेगा।

श्रीमान, जब मैंने यह अंक रखा तो गवर्नर जनरल के वर्तमान वेतन और भत्ते का मुझ पर भी प्रभाव पड़ा था। मेरे माननीय मित्रों वित्त समिति के सदस्यों ने मुझे यह बताया है कि गवर्नर जनरल के भत्ते इत्यादि का वर्तमान बजट 20 लाख रुपया प्रति वर्ष के लगभग है जिसमें से लगभग 11 लाख गवर्नमेंट हाउस की मरम्मत में व्यय हो जाता है और 9 लाख गवर्नर जनरल के सम्पच्यूरी तथा अन्य भत्तों पर। श्रीमान, मैं समझता हूं भारत जैसे निर्धन देश में, जिसके नेता महात्मा गांधी ने हमारे सामने आदर्श रखा था और उस आदर्श का हमें पालन करना चाहिये, इतनी राशि व्यय नहीं होनी चाहिये। अपने माननीय मित्र श्री त्यागी से मैं इस बात में सहमत हूं कि गवर्नर जनरल के जीवन निर्वाह का सारा खर्च राज्य बरदाश्त करे और इस प्रयोजन के लिये जो भत्ते उन्हें आवश्यक हों वे उनको दिये जायें—इसमें मेरी अनुमति है। मुझे दुख है कि आज भारत का गौरव उस बड़े वेतन में समझा जाता है जिसकी हम अपने राष्ट्रपति के लिये व्यवस्था कर सकते हैं और उस विशाल भवन में समझा जाता है जिसमें वह रहे। मैं समझता हूं कि हमारे आदर्श इससे भिन्न थे। वर्तमान गवर्नर जनरल जब कि मद्रास का मुख्य मंत्री था अपने ही घर में रहता था और मद्रास के मुख्य मंत्री के पदावास में नहीं गया था। परन्तु यहां हमने उसे एक उस भवन में रहने के लिये विवश किया है जिसकी केवल मरम्मत में 11 लाख रुपया लगता है। श्रीमान, मैं समझता हूं कि इन जीवन स्तरों को हमें बदल देना चाहिये। हमें अपने आदर्शों, अपनी संस्कृति और अपनी सभ्यता के अनुरूप रहना चाहिये। श्रीमान, इस भावनावश मैंने एक रुपये का अंक प्रस्तुत किया है।

श्रीमान, कांग्रेस के अध्यक्ष का कोई वेतन नहीं है और आज कांग्रेस का अध्यक्ष देश का एक बहुत ही महत्वपूर्ण कृत्यकारी बन गया है। यह अपना सारा समय राष्ट्र की सेवा में लगाता है और उसे कोई भत्ता नहीं मिलता है, परन्तु फिर भी मैं नहीं समझता हूं कि कांग्रेस के काम में किसी प्रकार की भी कमी हुई हो। यह ठीक है कि हमारे कांग्रेस के अध्यक्ष को जितना काम करना पड़ता है वह कदाचित उस काम से अधिक है जो गणराज्य के राष्ट्रपति को करना होगा। अत: मैं समझता हूं कि एक रुपये के इस अंक को रखने में मैंने केवल उस बात को कह दिया है जो अन्य सदस्यों के मन में है और जो हमारे प्राचीन आदर्श तथा संस्कृति और हमारे नवीन उद्देश्यों और आकांक्षाओं के अनुरूप है। मैं आशा करता हूं कि सभा इस संशोधन का समर्थन करेगी और मसौदा समिति इस उपक्रम पर विचार करेगी।

***श्री आर.के. सिधवा** (मध्य प्रान्त और बरार: जनरल): अध्यक्ष महोदय, मेरा संशोधन इस प्रकार है:

"कि सूची 6 (द्वितीय सप्ताह) के संशोधन संख्या 207 में प्रस्थापित भाग 1 की कंडिका 1 में राष्ट्रपति और राज्यपाल के वेतन संबंधी अंकों के पश्चात् यह और जोड़ दिया जाये:–

'The salaries of the President and the Governor shall be subject to income-tax' "

[राष्ट्रपति और राज्यपाल के वेतनों पर आयकर लगेगा।]

श्रीमान, इस संशोधन को पेश करने का और विशेषकर संविधान में इस बात का जिक्र करने का कि राष्ट्रपति और राज्यपाल के वेतनों पर आयकर होगा, कारण यह है। यद्यपि माननीय प्रस्तावक महोदय डॉ. अम्बेडकर ने यह कह दिया है कि उनके वेतनों पर आयकर लगेगा और यह एक साधारण नियम तथा प्रथा है कि चाहे आयकर का जिक्र न हो पर वह सब से लिया जाता है। यह बात बिल्कुल स्पष्ट है और इसके प्रति मुझे कोई संदेह भी नहीं है। परन्तु इसके होते हुये भी मैं इस बात के लिये इतना उत्सुक क्यों हूं कि इसका जिक्र कर दिया जाये इसका कारण यह है। अभी तक हमारे गवर्नर जनरल का जो वेतन मिल रहा था उस पर आयकर नहीं था। श्रीमान, आपको विदित है कि जब उसको 20,000/- रुपया मिल रहा था उस पर आयकर लगता था, परन्तु फिर भी लोगों को यह मालूम न था कि वास्तव में उसे क्या वेतन मिल रहा है, यहां तक कि जब संसद में इस विषय पर वाद विवाद हुआ तो उस समय अधिकांश सदस्यों को यह मालूम न था कि उसके वेतन पर आयकर लगता था। इस विषय की देश के इस सिरे से उस सिरे तक चर्चा हुई और लोगों ने समझा कि हमारे गवर्नर जनरल को 20,000/- रुपया नकद वेतन मिल रहा है और वह इतनी रकम अपनी जेब में डाल लेते हैं जब कि वास्तव में उनको केवल 8000/- या 9000/- रुपया मिलना था। बाद में विधान सभा ने यह संकल्प किया कि उनका वेतन 5,500/ रुपया होना चाहिये बिना किसी कर के। आज यदि आप उसे बढ़ा कर 10,000/ रुपया कर देंगे और जनता को यह नहीं बतायेंगे—तो जनता इस बात पर ध्यान नहीं देती है कि आयकर कटता है या अन्य कई करों के रूप में इतना कट जाता है—वह यही कहेगी कि राष्ट्रपति का वेतन 5,500/- रुपये से बढ़ाकर 10,000/- रुपया कर दिया। जनता केवल अंकों पर ध्यान देती है। वह पूछती है कि गवर्नर जनरल को क्या मिलता है और लोग कह देते हैं कि उसे 10,000/ रुपया मिलता है। अत: मैं चाहता हूं कि जनता को यह बात बिल्कुल स्पष्ट कर दी जाये। किसी समय आप जनता के सामने यह तर्क रख सकते हैं कि गवर्नर जनरल और गवर्नर से भी आयकर लिया जाता है। कभी-कभी वे विश्वास नहीं कर पाते। विश्वास करने में जब कभी उन्हें संकोच हो और यदि यह संविधान में दिया हुआ है तो निश्चित उत्तर द्वारा उनका खंडन किया जा सकता है। अत: श्रीमान, मैं यह अनुभव करता हूं कि चाहे यह बात व्यर्थ की हो, चाहे यह आवश्यक न हो, परन्तु इस अनावश्यक आलोचना से बचने के लिए कि राष्ट्रपति और राज्यपालों को मोटे-मोटे वेतन मिलते हैं मेरे संशोधन के शब्दों की प्रविष्टि बहुत ही आवश्यक है।

[श्री आर.के. सिधवा]

मेरे माननीय मित्र श्री त्यागी और प्रो. शिब्बन लाल सक्सेना ने वेतन की जो राशि बताई है उसको लेते हुये उन्होंने यह कहा कि गवर्नर जनरल को सन्यासी होना चाहिये। शायद वे उन विचारों से प्रभावित हो गये हैं जो हमें बिना किसी पारिश्रमिक के मानव सेवा करने के लिये सिखाये गये थे। मानवता की हमने अवेतन सेवा की है। वह और बात है। परन्तु आपको इन दोनों बातों को एक साथ नहीं मिलाना चाहिये जो परस्पर बिल्कुल भिन्न-भिन्न है। गवर्नर जनरल सरकार का प्रशासी मुखिया है। इस संविधान में इतने परिसीमनों द्वारा उसको निर्बन्धित किया गया है। मैं यह पूछता हूं कि जैसे निर्बन्धन इस संविधान में उस पर लगाये गये हैं क्या वैसे निर्बन्धन भारतीय राष्ट्रीय कांग्रेस या प्रान्तीय राष्ट्रीय कांग्रेस के अध्यक्षों पर भी हैं। क्या हमारी भारतीय राष्ट्रीय कांग्रेस के अध्यक्ष को यह स्वतन्त्रता नहीं है कि वह जो चाहे सो करे और जो चाहे सो कमाये? क्या प्रान्तीय कांग्रेस समिति के अध्यक्ष कमा नहीं रहे हैं? हम जानते हैं कि हमने त्याग किये हैं और त्याग कर रहे हैं। मैं भी उनमें से एक हूं।

***श्री महावीर त्यागी:** उसे लोक-धन का अपने लिये प्रयोग करने का हक नहीं है।

***श्री आर.के. सिधवा:** कृपया मेरी बात सुन लीजिये। आप अपनी बात कह चुके हैं। लोक-धन का मूल्य मैं जानता हूं। भावनाओं में बह जाने वाला व्यक्ति मैं नहीं हूं। मैं व्यवहारिक व्यक्ति हूं और यथार्थता में विश्वास करता हूं। लोक-धन के बरबाद करने से क्या लाभ? मैं यह जानना चाहता हूं कि जब आपने संविधान में इतने निर्बन्धन रख दिये हैं कि वह यह कार्य नहीं करेगा वह ऐसा होगा इत्यादि इत्यादि तो आप अपने राष्ट्रपति का भरण पोषण किस प्रकार करेंगे। क्या आपने उसको जकड़ने के लिये संविधान में कई कंडिकायें पारित नहीं की हैं? मेरे माननीय मित्र प्रो. शाह ने तो यहां तक चाहा था कि जो कुछ संपत्ति उसके पास हो राष्ट्रपति बनाने के पूर्व उसे वह प्रकट कर देनी चाहिये। वह संशोधन गिर गया, पर आप यह तो जानते हैं कि राष्ट्रपति को क्या होना चाहिये। उसे संदेह से परे होना चाहिये। उसे चरित्रवान व्यक्ति होना चाहिये। यद्यपि विधि के उपबन्धों के अन्तर्गत नहीं वरन् नैतिक रूप से वह देश की संपत्ति का संरक्षक है। उसे यह देखना होगा कि उस संपत्ति पर किस प्रकार प्रशासन किया जाता है। इस प्रयोजन के लिए वेतन के रूप में एक तुच्छ राशि आवश्यक है। मैं तुच्छ शब्द का प्रयोग कर रहा हूं: वाइसराय 20,000/- रुपया जिसमें से आयकर निकाल कर 9,000/- रुपया रह जाता है लेता था इसकी तुलना राष्ट्रपति के शुद्ध वेतन से करिये जो लगभग 5,000/- रुपया है। क्या यह गवर्नर जनरल के वेतन में शत प्रति शत की कमी और पहले राज्यपालों के वेतनों में पचास प्रतिशत की कमी एक महान त्याग नहीं है जो हमारे लोग कर रहे हैं?

उन लोगों से मेरा कोई झगड़ा या विवाद नहीं है जो सन्यासी राष्ट्रपति जैसी असंयत भाषा का प्रयोग करते हैं। मेरे माननीय मित्र श्री त्यागी ने कहा था कि राष्ट्रपति को सन्यासी होना चाहिये। श्री त्यागी सन्यासी हो सकते हैं चूंकि वे त्यागी हैं यदि उन्हें किसी समय राष्ट्रपति बनना है तो वे राष्ट्रपति बन सकते हैं। उनसे मेरा कोई विवाद नहीं है। मैं केवल यही पूछता हूं कि क्या हम यहां कांग्रेस के मंच पर हैं? यहां हम संविधान बना रहे हैं। मैंने केवल जेल जाकर ही त्याग नहीं किया है वरन् बड़ी-बड़ी सम्पत्तियों तक का त्याग किया है। इसी प्रकार से अनेक,

हजारों लाखों लोगों ने त्याग किया है। अपनी स्वतन्त्रता प्राप्त करने के लिये हमने जो कुछ किया उससे हमें प्रेरित नहीं होना चाहिये। हमने स्वतन्त्रता प्राप्त कर ली है। मानवता की हम सेवा कर चुके हैं, सब कुछ त्याग कर जैसे हमारे स्वामी ने हमें सिखाया वेसे हम देश के सर्वोत्तम हितों की रक्षा कर चुके हैं। यद्यपि मैं पैगम्बर नहीं हूं, पर मैं यह कहूंगा कि यदि हमारा स्वामी जीवित होता चूंकि मैं उनसे भली भांति परिचित था और यद्यपि मेरे कई मित्र मुझसे भी अधिक उनसे परिचित हैं, परन्तु वह भी इस विचार को विनोद में टाल देता जिसको हमारे दो मित्रों ने सभा के समक्ष रखा है।

अत: मेरा विचार यह है कि संविधान में जिस वेतन की व्यवस्था की गई है वह बहुत ही युक्तियुक्त है। मैं यह कहूंगा कि यह एक महान त्याग है। क्या उन कार्यकर्ताओं का यह त्याग नहीं है जो वकील और डॉक्टर की अपनी-अपनी सफल वृत्ति को त्याग कर नेता बने हैं। मुझे उन लोगों के उदाहरण मालूम हैं जो 20,000/- तथा 30,000/- रुपया कमाते थे और एक समय उन्होंने 500/- रुपये तक की नौकरी की और आज 1,500/- रुपये की नौकरी कर रहे हैं। क्या यह कहना उचित है कि यह लोक धन की बरबादी है? हमें स्वयं अपने तथा अपने नेताओं के कार्य को समझने में उदारता से काम लेना चाहिये और इस बात का हमें गौरव होना चाहिये कि हमने क्या क्या त्याग किये हैं और आज भी क्या क्या त्याग कर रहे हैं। कोई ऐसी प्रस्थापना न रखिये जिसके कारण समस्त संसार हम पर हंसे। यदि सभा मेरे भाषण पर हर्षध्वनि नहीं करती है तो मुझे इस बात की चिन्ता नहीं है। यदि श्री त्यागी की इस बात पर सभा ने हर्षध्वनि की कि उन्होंने वेतन के रूप में एक रुपया या इससे कुछ अधिक रखा तो इस बात की भी मुझे चिन्ता नहीं। यदि इस सभा में मेरा विरोध होता है तो भी मुझे कोई चिन्ता नहीं क्योंकि मैं जानता हूं कि यह प्रस्थापना ठीक है। मैं समझता हूं कि बिना वेतन वाली बात के कारण हमारी समस्त संसार में हंसी उड़ाई जायेगी। राष्ट्रपति और राज्यपालों ने इस वेतन को स्वीकार कर जो महान त्याग किया है उसे हमें समझना चाहिये। जब समय आयेगा तो मैं भत्तों को भी लूंगा। जहां तक वेतन का सम्बन्ध है मैं समझता हूं कि यह वेतन युक्तियुक्त है। श्रीमान, क्या भत्तों सम्बन्धी संशोधन को मैं पेश कर सकता हूं?

***अध्यक्ष:** जी हां, आप उसे पेश कर सकते हैं।

***श्री आर.के. सिधवा:** श्रीमान, मेरा संशोधन संख्या 262 कंडिका 2 और 3 में के भत्तों के सम्बन्ध में है। मैं प्रस्ताव पेश करता हूं:

"कि सूची 6 (द्वितीय सप्ताह) के संशोधन संख्या 207 में प्रस्थापित भाग 1 की 2 और 3 कंडिकाओं के स्थान में ये कंडिकायें रखी जायें:-

'There shall be paid to the President and to the Governor the following allowance:

The President shall draw a lump sum of Rs. 1,35,000 per annum which shall include the cost of renewal, repair and maintenance of furniture

[श्री आर.के. सिधवा]

and motor vehicles, also including sumptuary, contract and all other allowances.

The President shall also draw Rs. 10,000 per annum as touring expenses.

The Governors shall draw a lump sum of Rs. 15,000 per annum which shall include the cost of renewal, repair and maintenance of furniture and motor vehicles, also including sumptuary, contract and all other allowances.' "

The Governors shall also draw Rs. 7,000 per annum as touring expenses.' "

[राष्ट्रपति और राज्यपाल को निम्न भत्ते दिये जायेंगे:

राष्ट्रपति को 1,35,000 रुपये की एक मुश्त रकम मिलेगी जिसमें सामान तथा मोटरगाड़ियों की हिफाजत, मरम्मत और नवीनकरण का खर्च शामिल है और सम्पच्यूरी, संविदा तथा अन्य भत्ते भी शामिल हैं।

राष्ट्रपति को मार्ग व्यय के लिये 10,000 रुपये मिलेंगे।

राज्यपाल को 15,000 रुपये की एक मुश्त रकम मिलेगी जिसमें सामान तथा मोटरगाड़ियों की हिफाजत, मरम्मत और नवीनकरण का खर्च शामिल है और सम्पच्यूरी, संविदा तथा अन्य भत्ते भी शामिल हैं।

राज्यपाल को 7,000 रुपये मार्ग व्यय के लिये मिलेंगे।]

जहां तक गवर्नर जनरल के भत्तों का सम्बन्ध है, कल से मैं स्वयं गवर्नर जनरल के लिये सपरिषद सम्राट द्वारा निकाले गये आदेश की खोज कर रहा हूं और गवर्नर के सम्बन्ध में अतिरिक्त मुझे कोई अन्य अध्याय या अनुसूची न मिल सकी। मेरे माननीय मित्र डॉ. अम्बेडकर ने इस बात को बिल्कुल स्पष्ट किया कि ऐसी अनुसूची कभी बनी ही नहीं। मैंने समझा कि वह कहीं न कहीं होगी और मेरे हाथ नहीं लग रही है। अब मुझे यह विदित हुआ कि वह कभी बनी ही नहीं और राज्य के सचिव ने गवर्नर जनरल के भत्ते नियत कर दिये। वे क्या थे यह मैं नहीं जानता हूं। परन्तु डॉ. अम्बेडकर ने दृष्टान्त दिया और गत बजट से मैं भी यह सामग्री जुटा चुका था कि हमारे गवर्नर जनरल के लिये क्या व्यवस्था की गई थी। उन्होंने गवर्नर जनरल के विभिन्न प्रकार के भत्तों के लिये 6,64,000/- रुपये की राशि बताई है।

श्रीमान, आपकी अनुमति से 35,000/- रुपये को सही करके 1,35,000/- रुपये रखना चाहता हूं। इसके पक्ष में ये तर्क हैं। स्वतंत्रता प्राप्त करने के बाद जब मैं प्रथम बार गवर्नमेंट हाउस, दिल्ली गया—मेरे अन्य कई मित्र भी वहां गये होंगे—सर्वप्रथम मुझ पर ऐसा प्रभाव पड़ा कि यह गवर्नमेंट हाउस कल ही बनवाया गया है। मेरे मित्रों ने जिस सजधज और सफाई के साथ यह भवन रखा जाता है वह देखा ही होगा। मैं यह विश्वास दिला सकता हूं कि पहले जो धन इस पर खर्च किया जा चुका है उसका सदुपयोग हुआ है। जिस फर्श का प्रयोग किया जा चुका है वह शीशे की भांति चमक रहा था, छत सुनहरी रंग और चित्रकारी और विभिन्न प्रकार की गृह सामग्री इस प्रकार की थीं कि मानों कल ही तैयार की गई हैं। इसका कारण स्पष्ट वहां की हिफ़ाज़त है। गृह प्रबन्धक स्त्री है या पुरुष यह तो मैं नहीं जानता हूं: वह चाहे कोई भी हो परन्तु इस ऐतिहासिक स्थान को ऐसी दशा में रखने के लिये जैसी दशा में वह है वह व्यक्ति इस देश की जनता से श्रेय प्राप्त करने के योग्य है। यह सुझाव दिया गया है कि गवर्नमेंट हाउस को चिकित्सालय बना दिया जाए। मैं इस विचार का विरोध करता हूं। वह चिकित्सालय के लिये नहीं है चाहे यह बात मेरे मित्र श्री सक्सेना और श्री त्यागी को अच्छी लगे। इसका प्रयोग लाभदायक प्रयोजन के लिये होना चाहिये। आज वह एक कौतुकालय के रूप में प्रयोग में लाई जा रही है और हजारों लोग वहां आते हैं और गवर्नमेंट हाउस को देखने का अवसर प्राप्त करते हैं।

***डॉ. पी.एस. देशमुख:** (मध्यप्रान्त और बरार: जनरल): हम किस बात पर वाद-विवाद कर रहे हैं? गवर्नमेट हाउस पर या भत्तों पर?

***श्री आर.के. सिधवा:** भत्तों पर। हमें इस बात का ध्यान रखना है कि इस विषय में हम लोभ न करें। इसी कारण मैंने 1,35,000/- रुपये रखे हैं। 1,35,000/- रुपये की राशि में सम्पच्यूरी भत्ता, संविदा भत्ता और सामान का नवीनकरण शामिल है। यदि आप राज्यपालों के लिये भत्ते की व्यवस्था करने वाले परिषद् के आदेश को देखें तो आप को विदित होगा कि बम्बई के राज्यपाल को केवल 25,000/- रुपया मिलता है और कर्मचारी वृन्द सैनिक सचिव इत्यादि को 1,36,000/- रुपये। मैं इन विषय को नहीं ले रहा हूं। उनको नियुक्तियों की वास्तविक संख्या के लिये दिया जा सकता है। मुझे बताया गया है कि बम्बई, मद्रास और बंगाल के राज्यपालों के पास बेन्ड थे पर उनको हटा दिया गया। मद्रास को अधिकतम 43,000/- रुपया दिया जाता है। यदि उसके पास अंगरक्षक हैं तो उसे 1,26,000/- रुपया दिया जाता है। भत्ते की राशि में मैं इसे सम्मिलित नहीं कर रहा हूं। और फिर एक सर्जन और उसके लिये पूरी व्यवस्था है—मद्रास के लिये अधिकतम 36,000/- रुपया है कि और बम्बई के लिये 33,000/- रुपया। इन विषयों को मैं नहीं ले रहा हूं क्योंकि इन नौकरियों के लिये देना ही पड़ेगा। इसके बाद सरकारी आवासों के सामान, मरम्मत और हिफाजत का प्रश्न उठता है। इसके लिये अधिकतम बंगाल को 34,000/- रुपया है, मद्रास को 21,500/-, बम्बई को 25,000/- और न्यूनतम आसाम को 4,000/- रुपये है। हमने राज्यपालों के सरकारी गृहों को भी देखा है और वे भी बहुत बड़े-बड़े हैं। हमारे गवर्नर जनरल बंगाल के राज्यपाल थे और उन्होंने बताया था कि वहां 134 कमरे थे और वे स्वयं उन सब कमरों को देख

[श्री आर.के. सिधवा]

तक न सके थे, उसकी हिफाजत के लिये 25,000/- रुपये एक ठीक रकम होगी। अत: दिल्ली में के गवर्नमेन्ट हाउस को देखकर मेरा विचार इस राशि को 1,35,000/- रुपये तक बढ़ा देने का हुआ।

संविदा भत्ते के लिये अर्थात् प्रकीर्ण व्यय जिसके अन्तर्गत मोटरगाड़ी का खर्च भी सम्मिलित है। बम्बई के लिये 1,08,000/- रुपये की व्यवस्था है; इसके बाद मद्रास आता है और तीसरे नम्बर पर बंगाल है। न्यूनतम उड़ीसा के लिये 11,500/- रुपया है। मार्ग व्यय बहुत अधिक है। बंगाल के लिये 1,22,000/- रुपये, मद्रास के लिये 1,13,000/- और बम्बई के लिये 65,000/- की व्यवस्था है। पहले राज्यपाल आनन्द के लिये जाते थे। उन्हें किसी कर्तव्य का पालन करना नहीं होता था। कदाचित वह प्रशासी मुखिया होता था और इस प्रकार वह मुख्य कार्यपालक भी होता था और शायद इस कारण उन्हें यात्रा करनी पड़ती थी। अब हमारे राज्यपालों के पास कार्यपालिका का कार्य नहीं होगा। वे केवल आवश्यकता पड़ने पर ही कहीं जायेंगे। अत: राष्ट्रपति के मार्ग व्यय के लिये 10,000/- और राज्यपालों के लिये 7,000/- मैंने रखा है। मैं इस रकम को ठीक-ठीक समझता हूं। राज्यपालों से तथा राष्ट्रपति से भी यह आशा नहीं की जाती है कि वे अपने स्थानों को छोड़कर कहीं जायेंगे। अत: मैं समझता हूं कि सामान और मोटरगाड़ियों की मरम्मत और हिफाजत के लिये जिस के अन्तर्गत सम्पच्यूरी भत्ता तथा अन्य भत्ते भी सम्मिलित हैं 35,000/- जो मैंने पहले रखा था उसके स्थान में राष्ट्रपति के लिये 1,35,000/- और राज्यपालों के लिये 15,000/- युक्ति युक्त होगा।

माननीय डॉ. अम्बेडकर ने यह कहा था कि इन बातों को संसद के विनिश्चय पर छोड़ दिया जाये। यह एक बहुत बड़ा मद है। मुझे अभी यह बताया गया है कि विभिन्न प्रयोजनों के लिये गवर्नमेन्ट हाउस दिल्ली पर 18 से 20 लाख तक खर्च हो रहा है। हमारे पास इस खर्च की ठीक-ठीक राशि तो नहीं है पर एक बहुत बड़ी राशि खर्च होती है। अत: मैं यह समझता हूं कि राष्ट्रपति और राज्यपालों के भत्तों के प्रयोजनार्थ अनुसूची में विशेष रूप से वर्णन होना चाहिये। आखिर वेतन तो उनके निजी वैयक्तिक प्रयोजनों के लिये है और मैं यह नहीं चाहता हूं कि जनता यह कहे कि राज्यपालों ने वेतन तो कम स्वीकार किया है पर वे परोक्ष रूप से इन भत्तों में से धन प्राप्त कर लेते हैं। साथ ही साथ हमें जनता को यह भी बताना है कि भत्ते की दो लाख की एक बड़ी रकम को घटाकर हमने बहुत कम कर दिया है और यह रकम सरकारी गृहों की हिफाजत करने के लिये वास्तव में आवश्यक है। यदि हम राज्यपालों और राष्ट्रपतियों से सन्यासी बन जाने के लिये कह कर उनके रहन-सहन के ढंग में केवल परिवर्तन करना चाहते हैं तो ये सरकारी गृह उपयुक्त नहीं हैं। तब तो उन्हें कुटिया में जाकर रहना होगा—शायद कभी ऐसा समय आये—यद्यपि मैं यह नहीं जानता हूं कि वह समय कब आयेगा जब हमारे रहन-सहन का दृष्टिकोण और रहन-सहन की प्रणाली में परिवर्तन

हो। हम यह नहीं चाहते हैं कि गवर्नमेन्ट हाउस की वस्तुऐं बरबाद या खराब हों। हमें राज्य के खर्च से उनकी हिफाज़त करना है और वास्तव में भावी संतति का यह कर्तव्य है कि वह इस बात का ध्यान रखे कि ये भवन स्मारकों के रूप में रहें। हां इनमें से कुछ भवन बहुत ही जीर्ण शीर्ण दशा में हैं। यहां तक कि बम्बई का सरकारी गृह भी बहुत प्राचीन है। मसौदा समिति से मैं यह निवेदन करता हूं कि वह संविधान में भत्ते की व्यवस्था करे जिससे कि यह न कहा जा सके कि भत्तों में से धन का अपव्यय किया जाता है और इस प्रकार राज्यपालों पर लांछन लगाया जा सके। इन शब्दों में मैं अपने संशोधन को पेश करता हूं।

***श्री एच.वी. कामतः** (मध्य प्रान्त और बरारः जनरल): श्रीमान, क्या प्रत्येक भाग पर या समस्त अनुच्छेद पर साधारण वाद विवाद होगा?

***अध्यक्षः** समूचे अनुच्छेद पर मैं संशोधनों को लूंगा और उसके बाद हम साधारण वादविवाद रखेंगे। संख्या 264 ।

***प्रो. शिब्बन लाल सक्सेनाः** श्रीमान, मैं प्रस्ताव पेश करता हूंः

"कि सूची 6 (द्वितीय सप्ताह) में संशोधन संख्या 210 के निर्देशानुसार भाग 3 की कंडिका 8 के स्थान में यह कंडिका रखी जायेः—

'8. There shall be paid to the Speaker and the Deputy Speaker of the provisional Parliament, such salaries and allowances as were payable to the Speaker and the Deputy Speaker of the Constituent Assmbly of the Dominion of India immediately before the commencement of this Constitution.'

[अंतर्कालीन संसद के अध्यक्ष तथा उपाध्यक्ष को ऐसे वेतन और भत्ते दिये जायेंगे जैसे कि भारत डोमिनियन की संविधान सभा के अध्यक्ष तथा उपाध्यक्ष को इस संविधान सभा के प्रारम्भ से ठीक पहले दिये थे।]

श्रीमान, वर्तमान रूप में भाग 3 में यह कहा गया है—

"लोक-सभा के अध्यक्ष और राज्य-परिषद् के सभापति को ऐसे वेतन और भत्ते दिये जायेंगे जैसे कि भारत डोमिनियन की संविधान सभा के अध्यक्ष को इस संविधान सभा के प्रारम्भ से ठीक पहले दिये थे।"

स्थिति यह है कि अन्तर्वर्ती काल में लोक-सभा का न तो अध्यक्ष होगा और न राज्य-परिषद का सभापति। इस समय हम केवल अन्तर्वर्ती काल के लिये उपबन्ध बना रहे हैं बाद में संसद वेतन निश्चित करेगी। इस कारण यह वर्तमान संशोधन ठीक नहीं बैठता है। भाग 3 में आगे यह और कहा गया है—

"...और लोक-सभा के उपाध्यक्ष तथा राज्य-परिषद् के उप-सभापति को ऐसे वेतन और भत्ते दिये जायेंगे जैसे कि क्रमशः विधान-सभा के उप-सभापति और राज्य-परिषद् के उप-सभापति को 15 अगस्त 1947 से ठीक पहले दिये थे।"

[प्रो. शिब्बन लाल सक्सेना]

डॉ. अम्बेडकर के द्वारा पेश किये संशोधन में वे चाहते हैं—

"कि 'क्रमशः विधान-सभा के उप-सभापति और राज्य-परिषद् के उप-सभापति को 15 अगस्त, 1947 से ठीक पहले' शब्दों के स्थान में 'भारत डोमिनियन की संविधान सभा के उपाध्यक्ष को इस संविधान के प्रारम्भ से ठीक पहले' शब्द रख दिये जायें।"

यदि यह संशोधन स्वीकार कर लिया जाता है तो कंडिका का पाठ इस प्रकार का हो जायेगा:—

"....तथा लोक-सभा के उपाध्यक्ष को और राज्य-परिषद् के उप-सभापति को ऐसे वेतन और भत्ते दिये जायेंगे जैसे कि भारत डोमिनियन की संविधान सभा के उपाध्यक्ष को इस संविधान के ठीक पहले दिये थे।"

वर्तमान परिस्थिति में यह ठीक नहीं बैठता है। यह स्पष्ट है कि कोई न कोई त्रुटि है और इसी प्रकार मैंने यह संशोधन भेजा है। मेरे इस संशोधन में यह कहा गया है कि अन्तर्कालीन संसद के अध्यक्ष तथा उपाध्यक्ष को ऐसे वेतन और भत्ते दिये जायेंगे जैसे कि भारत डोमिनियन की संविधान सभा के अध्यक्ष तथा उपाध्यक्ष को इस संविधान सभा के प्रारम्भ से ठीक पहले दिये थे। मुझे विश्वास है कि डॉ. अम्बेडकर से कोई भूल हो गई है और मसौदा समिति ने उस पर ध्यान नहीं दिया है। मैं अपने मित्र श्री टी.टी. कृष्णमाचारी का ध्यान भाग 3 के इस अंश की ओर आकर्षित करूंगा कि जिसमें स्पष्ट कोई त्रुटि है। अन्तर्वर्ती काल में हमारी लोक-सभा का कोई अध्यक्ष नहीं होगा। मैं आशा करता हूं कि मसौदा समिति द्वारा मेरा संशोधन स्वीकार कर लिया जायेगा और आवश्यक सुधार कर लिया जायेगा।

***अध्यक्षः** इसके बाद हम भाग 4 पर आते हैं। संशोधन संख्या 165 और 265 एक से हैं, श्री नज़ीरुद्दीन अहमद।

***श्री नज़ीरुद्दीन अहमदः** (पश्चिमी बंगालः मुस्लिम): श्रीमान, मुझे संशोधन संख्या 265, 267 और 270 पेश करने हैं। अंतिम सूची में मैंने उनको फिर से इकट्ठा रख दिया है।

श्रीमान, मैं प्रस्ताव पेश करता हूं:

"कि सूची 6 (द्वितीय सप्ताह) के संशोधन संख्या 211 में प्रस्थापित भाग 4 की कंडिका 10 की उप-कंडिका (1) में—

(i) '5000' संख्या के स्थान में '6000' संख्या रख दी जाये; और

(ii) '4000' संख्या के स्थान में '5000' संख्या रख दी जाये।"

मैं यह प्रस्ताव भी पेश करता हूं:

"कि सूची 6 (द्वितीय सप्ताह) के संशोधन संख्या 211 में प्रस्थापित भाग 4 की कंडिका 10 की उपकंडिका (3) में—

(i) 'thirty-first day of October 1948' (31 अक्तूबर, 1948) शब्द और अंक के स्थान में 'commencement of this Constitution' (इस संविधान के प्रारम्भ) शब्द रख दिये जायें;

(ii) 'the commencement of this Constitution' (इस संविधान के प्रारम्भ) शब्दों के स्थान में 'such commencement' (ऐसे प्रारम्भ) शब्द रख दिये जायें।"

अपने संशोधन के भाग (3) को मैं पेश नहीं करता हूं।

मैं यह प्रस्ताव भी पेश करता हूं:

"कि सूची 6 (द्वितीय सप्ताह) के संशोधन संख्या 211 में प्रस्थापित भाग 4 की कंडिका 11 की उप-कंडिका (1) में—

(i) '4000' संख्या के स्थान में '5000' संख्या रख दी जाये; और

(ii) '35,500' संख्या के स्थान में '4000' संख्या रख दी जाये।"

मैं यह प्रस्ताव भी पेश करता हूं:

"कि सूची 6 (द्वितीय सप्ताह) के संशोधन संख्या 211 में प्रस्थापित भाग 4 की कंडिका 11 की उप-कंडिका (2) में—

(i) 'thirty-first day of October 1948' (31 अक्तूबर, 1948) शब्द और अंक के स्थान में 'commencement of this Constitution' (इस संविधान के प्रारम्भ) शब्द रख दिये जायें;

(ii) 'the commencement of this Constitution' (इस संविधान के प्रारम्भ) शब्दों के स्थान में 'such commencement' (ऐसे प्रारम्भ) शब्द रख दिये जायें।"

श्रीमान, इस संशोधन के तीसरे भाग को मैं जरा-सा बदल कर रखना चाहता हूं यद्यपि प्रभाव उसका वही रहेगा। परिवर्तन केवल शाब्दिक होगा। मैं प्रस्ताव पेश करता हूं:

"कि अनुसूची 2, भाग 4, कंडिका 11, उपकंडिका (2) में shall be entitled' (हक होगा) शब्दों के स्थान में 'shall in addition to the salaries specified

[श्री नजीरुद्दीन अहमद]

in sub-paragraph (1) of this paragraph be entitled' (इस कंडिका की उपकंडिका (1) में उल्लिखित वेतनों के सहित हक होगा) शब्द रख दिये जायें।"

श्रीमान साधारण.....

***अध्यक्ष:** किसके सहित?

***श्री नज़ीरुद्दीन अहमद:** "इस कंडिका की उपकंडिका (1) में उल्लिखित वेतनों के सहित।" यह पद रचना ठीक इसी रूप में कंडिका 10 की उपकंडिका (3) में वर्तमान है और इस उपकंडिका में यह भूल से रह गई है और जिस संशोधन का मैंने सुझाव दिया है वह इस प्रसंग में उपयुक्त है।

श्रीमान, मेरे संशोधनों के साधारण प्रयोजन के संबंध में यह बात है कि वे उच्चतम न्यायालय और उच्च न्यायालय के न्यायाधीशों के कुछ वेतनों के बढ़ाने के लिये हैं जिससे कि वर्तमान स्तर के अनुरूप वेतन हो जायें।

***अध्यक्ष:** आप संशोधन संख्या 271 पेश नहीं कर रहे हैं?

***श्री नज़ीरुद्दीन अहमद:** मेरे पास उसकी प्रति नहीं है। श्रीमान, मैं यह प्रस्ताव भी पेश करता हूं:

"कि सूची 6 (द्वितीय सप्ताह) के संशोधन संख्या 211 में प्रस्थापित भाग 4 की कंडिका 12 की उपकंडिका (ख) के मद (2) में से 'excluding any time during which the judge is absent' (उस समय को न गिनकर जिसमें कि वह न्यायाधीश छुट्टी लेकर अनुपस्थित है) शब्द अपमार्जित कर दिये जायें।"

श्रीमान, जैसा कि मैं कह चुका हूं मेरा उद्देश्य उच्च न्यायालय और उच्चतम न्यायालय के न्यायाधीशों के वेतन को पुराने वेतन के बराबर लाना है। श्रीमान, न्यायाधीशों के सम्बन्ध में एक तथ्य को स्पष्ट याद रखना चाहिये। वह तथ्य यह है कि वकीलों में से बहुत ही सफल वकील को जिस की बहुत अधिक आय होती है उसे न्यायाधीश बनाया जाता है। यदि वह एक अच्छा वकील नहीं है और उसकी आय अधिक नहीं है तो वह न्यायाधीश के रूप में नियुक्त होने के योग्य नहीं है। यह बहुत ही आवश्यक है कि हमारे न्यायाधीशों का जीवन स्तर ठीक-ठीक हो और उसको एक उच्च स्तर पर रखा जाये। न्यायाधीश विशेषकर उच्च न्यायालय तथा सर्वोच्च न्यायालय के न्यायाधीश महान विशेषज्ञ होते हैं और यह बहुत ही आवश्यक है कि इतने उच्च और महान कार्य के लिये उनको ठीक-ठीक पर्याप्त वेतन दिया जाये। उनको विशेषज्ञ के रूप में समझना चाहिये और उसी रूप में उनको वेतन मिलना चाहिये। यदि हम अपने न्यायाधीशों को पर्याप्त वेतन नहीं देंगे तो फल यह होगा कि कुछ समय के बाद उच्च तथा योग्य वकील उच्च

न्यायालयों तथा उच्चतम न्यायालय की न्यायाधीशता स्वीकार करने के लिये आकर्षित नहीं होंगे।

न्यायाधीशों के वर्तमान वेतन के संबंध में डॉक्टर अम्बेडकर द्वारा एक यह संशोधन पेश किया गया है कि वह वेतन केवल वर्तमान न्यायाधीशों को ही दिया जाये। मैंने अनुच्छेद 310 पर कुछ दिनों पहले इस प्रभाव का एक संशोधन भेजा था, उस समय मुझसे यह स्पष्ट कहा गया था कि उसके लिये उपयुक्त स्थल इस अनुसूची में होगा। मैंने उस बात को मान लिया यद्यपि मैं इस बात से सहमत न था कि उसके लिये उपयुक्त स्थल यह है। उसके लिये स्थल तो अनुच्छेद 310 ही था क्योंकि जहां तक उच्च न्यायालय के न्यायाधीशों का संबंध है उस अनुच्छेद में यह उपबन्धित है कि 26 जनवरी 1950 को वर्तमान न्यायाधीश स्वत: ही उच्च न्यायालयों के न्यायाधीश हो जायेंगे। अनुच्छेद 310 पूर्णतया अनावश्यक था क्योंकि प्रत्येक पदाधिकारी चाहे वह किसी भी भी पद पर हो स्वत: ही अपने पद पर बना रहेगा चाहे नया संविधान प्रवृत्त हो जाये। उनकी नौकरी को बनाये रखने के प्रयोजन से तो अनुच्छेद 310 स्पष्टतया निरर्थक है। अन्य किसी सेवा के लिये ऐसा उपबंध आवश्यक नहीं समझा गया। इस अनुच्छेद का आशय इससे अधिक गहरा था। न्यायाधीशों के वेतन संबंधी उपबन्धों का द्वितीय अनुसूची में हस्तान्तरण कर और इस प्रकार एक अति परोक्ष रीति से उनके वेतन कम करने का बहाना कर मैं समझता हूं कि इस अनुच्छेद को न्यायाधीशों के वेतन को चुपचाप प्रकट किये बिना कम करने के लिये पुर:स्थापित किया है। मेरा विचार यह है कि अनुच्छेद 310 के न होने पर भी न्यायाधीश उसी प्रकार से बने रहते जिस प्रकार से अन्य लोक सेवक बने रहेंगे।

उच्चतम न्यायालय के न्यायाधीशों का विषय बिलकुल ही भिन्न है। जिस तिथि को यह संविधान प्रवृत्त होता है उसी तिथि से फेडरल न्यायालय के न्यायाधीश उच्चतम न्यायालय के न्यायाधीश बन जाते हैं। इस प्रकार का एक अनुच्छेद आवश्यक था परन्तु अनुच्छेद 310 जैसा अनुच्छेद उच्च न्यायालय के न्यायाधीशों के लिए बिल्कुल ही आवश्यक न था। श्रीमान, अनुच्छेद 310 उच्च न्यायालय के वर्त्तमान न्यायाधीशों को इस संविधान के प्रारम्भ की तिथि से स्वत: ही उच्च न्यायालय के न्यायाधीशों के रूप में कार्य करने की अनुमति देता है तो उनको वही वेतन मिलना चाहिये जो उन्हें पहले मिल रहा था। केवल इस आधार पर कि हमने यह विधान पास कर दिया है न्यायाधीशों का वेतन कम नहीं किया जा सकता है। अत: जैसाकि मैं कह चुका हूं मैं इस बात पर जोर देता हूं कि अनुच्छेद 310 न्यायाधीशों के वेतन को चुपचाप कम करने के लिये एक बड़ी ही वक्र योजना है।

इसके बाद हम औचित्य प्रश्न पर आते हैं। यह एक प्रसिद्ध बात है कि उच्च न्यायालयों के न्यायाधीश अपने उच्च बौद्धिक कार्य के अनुरूप, जिसके करने के वे अभ्यस्त थे, उच्च वेतन प्राप्त कर रहे थे। यह सत्य है कि उच्च न्यायालय के न्यायाधीश का पद स्वीकार करने में एक बहुत ही सारवत आर्थिक त्याग करना पड़ता था। हमारे यहां इस सभा में दो प्रसिद्ध भूतपूर्व न्यायाधीश हैं और वे इस बात के साक्षी हैं कि उच्च न्यायालय के न्यायाधीश का पद बिना किसी कार्य के वेतन युक्त पद नहीं है। यह बड़े परिश्रम तथा बड़ी चिन्ता का पद है और उनके कर्तव्य का संतोषजनक निर्वहन करने के लिये महान परिश्रम तथा गुरुतर

[श्री नज़ीरुद्दीन अहमद]

कार्य आवश्यक है। हर कोई व्यक्ति उच्च न्यायालय का एक बहुत अच्छा न्यायाधीश नहीं बन सकता है। केवल विशेषज्ञ और उच्च योग्यता प्राप्त व्यक्ति ही अच्छा न्यायाधीश बन सकता है। केवल वही व्यक्ति जिसका उच्च बौद्धिक विकास है और जो बहुत परिश्रम कर सकता है उच्च न्यायालय के न्यायाधीश के कर्त्तव्य का निर्वहन कर सकता है। फेडरल न्यायालय या उच्चतम न्यायालय के न्यायाधीश की योग्यता इससे भी अधिक होती है। अतः मैं निवेदन करता हूं कि इन न्यायाधीशों का वेतन कम नहीं होना चाहिये। जो वेतन उन्हें मिल रहा था वही मिलता रहे, परन्तु मसौदा समिति का वर्तमान सुझाव इस प्रभाव का है कि केवल वे न्यायाधीश जिनकी नियुक्ति 1 नवम्बर, 1948 से पूर्व हुई थी अपना पहला वेतन पाते रहेंगे, पर इसके बाद में नियुक्त हुए न्यायाधीश को बहुत कम मिलेगा। इस भेद विभेद में मुझे कोई न्याय नहीं दिखाई देता है विशेषकर इस बात को ध्यान में रखते हुए कि रुपये का मूल्य वर्तमान अवमूल्यन के अतिरिक्त भी बहुत ही गिर गया है। अवमूल्यन के पूर्व युद्ध के पूर्व काल की तुलना में रुपये का अधिक से अधिक मूल्य चार आने था। अब आधुनिक अवमूल्यन के कारण रुपये का मूल्य और भी अधिक गिर गया है और इस कारण न्यायाधीशों के वेतन का मूल्य अधिक नहीं रहा। वर्तमान समय में जो वेतन है वह कई वर्षों से चल रहा है। न्यायाधीशों को ऊंची दर के अनुसार आयकर भी देना होगा। यदि आप एक न्यायाधीश को अधिक वेतन देते हैं तो आप उसको पूरा का पूरा वेतन नहीं देते हैं। आप उसके वेतन में से 20 प्रतिशत काट लेंगे और यदि किसी न्यायाधीश को कोई और आय है तो यह कटौती और भी अधिक हो जायेगी।

***डॉ. पी.एस. देशमुखः** उस आय को वह छोड़ दें।

***श्री नज़ीरुद्दीन अहमदः** यह इतना उच्च स्तर है कि हमारे जीवन में वह व्यवहार्य नहीं हो सकता। जिस माननीय सदस्य ने मेरे भाषण में बाधा डाली है वे अपनी आय छोड़ने के लिये राजी नहीं होंगे। मैं निवेदन करता हूं कि आयकर लगेगा। आयकर को काट कर वेतन बहुत कम रह जाता है और रुपये का कम मूल्य हो जाने के कारण उनको बहुत कम वेतन मिलेगा। उनसे जिस विशिष्ट ज्ञान और उच्च कोटि के कार्य की आशा की जाती है उस पर विचार करते हुए उनको पुराना वेतन मिलता रहना चाहिये। उनका जीवन इतना कोलाहल तथा उत्तेजनापूर्ण नहीं है जितना हम समझते हैं। समाज से वे लगभग पृथक से रहते हैं। राजनीति में भाग लेने का सुअवसर उन्हें नहीं मिल सकता।

***श्री एच.वी. कामतः** वे क्लबों में जाते हैं।

***श्री नज़ीरुद्दीन अहमदः** यदि वे क्लबों में जाते भी हैं तो उन्हें वहां हम में से कुछ लोगों से अधिक गंभीर होकर रहना पड़ता है। अवकाश प्राप्त करने के बाद न्यायाधीशों को अपने प्रान्त से बाहर वकालत करने दिया जाता था। परन्तु अब वे भारत के किसी भाग में भी वकालत नहीं कर सकते हैं। मैं निवेदन करता हूं कि उनके वेतन कम करने के पक्ष में कोई भी बात नहीं है।

उच्चतम न्यायालय के न्यायाधीशों के वेतन के विषय में यह बात है कि हमें 26 जनवरी से स्वतंत्रता मिलेगी। (**एक सदस्य**–हम स्वतंत्र हो गये हैं।) अभी हम

स्वतंत्र नहीं हैं। हम अभी भी एंग्लो अमेरिकन गुट के पल्ले से बंधे हुए हैं। हमें सच्ची स्वतंत्रता प्राप्त नहीं हुई है। तत्कथित स्वाधीनता प्राप्त होने पर फेडरल न्यायालय उच्चतम न्यायालय में परिवर्तित हो जायेगा। उच्चतम न्यायालय के फेडरल न्यायालय के ही कृत्यों को नहीं करेगा बल्कि प्रीवी कौंसिल के कृत्यों को भी करेगा। वह भारत का सर्वोच्च न्यायालय होगा और विधि के विषय में वास्तव में वह उच्चतम न्यायालय होगा। उच्चतम न्यायालय को फेडरल न्यायालय से अधिक शक्तियां प्राप्त होंगी और उसका स्थान उच्चतर होगा।

परन्तु फेडरल न्यायालय की न्यायाधीशता की स्थिति को हम उच्चतम न्यायालय की न्यायाधीशता के उच्च स्तर पर ले जा रहे हैं और उनके पद और शक्ति में वृद्धि कर रहे हैं और साथ ही साथ हम उनके वेतन को भी घटा रहे हैं। यह अन्याय है। लोकतंत्र को क्रियान्वित करने के लिये इससे अधिक महत्वपूर्ण बात और दूसरी नहीं है कि उच्चतम न्यायालय के न्यायाधीशों की दक्षता और योग्यता को अक्षुण्ण रखा जाये। यदि उनका वेतन घटा दिया जाता है तो न्यायालय को जिस सीमा की योग्यता, प्राधिकार और गौरव की आवश्यकता है उससे कम गुणों वाले लोग इन उच्च पदों की ओर आकर्षित होंगे। परिणाम यह होगा न्यायपालिका की कार्यकुशलता में कमी आ जायेगी। उच्चतम न्यायालय इस सभा तथा देश से सर्वोच्च सम्मान प्राप्त करने के योग्य है। उनकी भरती उच्च न्यायालय के न्यायाधीशों में से की जायेगी और उन्हें भारत की राजधानी में आना होगा और उन्हें दो स्थानों पर व्यवस्था करनी पड़ेगी एक अपने घर पर और दूसरी राजधानी में।

इसके बाद मैं वर्तमान न्यायाधीशों के वेतन संबंधी अपने संशोधन के दूसरे भाग पर आता हूं। वर्तमान प्रस्थापना के अनुसार जिन वर्तमान न्यायाधीशों की नियुक्ति 31 अक्तूबर, 1948 तक हुई थी केवल वे ही पुराना वेतन पाते रहेंगे। मैं निवेदन करता हूं कि यह तिथि मनमानी है और किसी पुष्ट सिद्धांत के आधार पर आश्रित नहीं है। उन न्यायाधीशों के वेतन की भी रक्षा करनी चाहिये जिनकी नियुक्ति इस तारीख के पश्चात् और नये संविधान के प्रतिष्ठापन से पहले हुई है। कोई ऐसी बात नहीं है कि उनको कम क्यों मिले। और फिर एक उपबन्ध यह भी है कि उच्चतम न्यायालय के न्यायाधीशों को सरकारी गृह मिल सकेगा; यह भी केवल उन न्यायाधीशों के लिये है जिनकी नियुक्ति बाद में होगी। जिन न्यायाधीशों को उच्च वेतन मिल रहा था उनको उच्च वेतन तो मिलता रहेगा पर सरकारी गृह मिलने का उन्हें हक नहीं होगा। मैं निवेदन करता हूं कि इन दो वर्गों के न्यायाधीशों के साथ यह दो प्रकार का व्यवहार एक प्रकार की वाणिज्यिक प्रवृत्ति पर आश्रित है। मैं निवेदन करता हूं कि फेडरल न्यायालय के सब न्यायाधीशों को बिना किराये का सरकारी मकान मिलना चाहिये। इस विषय के इस अंग से संबंधित दो संशोधन आनुषंगिक हैं और उनका विशेष रूप से वर्णन करना अपेक्षित नहीं है।

इसके बाद मैं भाग (3) के संशोधन संख्या 270 पर आता हूं। यह संशोधन वास्तव में उस रिक्त स्थल की पूर्ति करता है जो मसौदा समिति से अनजाने में रह गया है। मैं कंडिका 10, उप-कंडिका (3) की ओर ध्यान आकर्षित करता हूं। उसमें यह कहा गया है कि "इस कंडिका की उप-कंडिका (1) में उल्लिखित

[श्री नज़ीरुद्दीन अहमद]

वेतन के साथ-साथ" वर्तमान न्यायाधीश को वर्तमान वेतन और नये वेतन का अन्तर मिलेगा। यह तथ्य कि जो वेतन उन्हें मिलेगा 'उसके साथ' पुराने और नये वेतनों का अन्तर भी मिलेगा कंडिका 10 में विशिष्ट रूप से उल्लिखित है। परन्तु कंडिका 10 की उप-कंडिका (2) में से यह शर्त्त निकाल दी गई है। इसका प्रभाव यह है कि जिस न्यायाधीश को इस समय 4000 रुपये मिल रहा है उसे नये वेतन के अनुसार 3,500 रुपये मिला करेगा और इस स्वीकृत 3,500 रुपये के साथ साथ 500 रुपया और मिलेगा; परन्तु जैसा यह है उससे यह ख्याल होता है कि उसको केवल विशेष वेतन मिलेगा जो 4,000 रुपये और 3,500 रुपये के अन्तर के बराबर केवल 500 रुपया होगा। इस तथ्य का अभाव कि यह राशि नये मंजूर किये गये वेतन के 'अतिरिक्त' होगी कंडिका 10 की उप-कंडिका (2) में है। यह एक ऐसी भूल है जो अनजाने में हो गई है और मैं निवेदन करता हूं कि मेरा संशोधन स्वीकार किया जाये।

मेरा अन्तिम संशोधन औपचारिक है और उसकी व्याख्या करने में मैं सभा का समय लेना नहीं चाहता हूं। मैं यह सुझाव देता हूं कि इस संशोधन को भी स्वीकार किया जाये।

***श्री ब्रजेश्वर प्रसाद** (बिहार: जनरल): श्रीमान, मैं प्रस्ताव पेश करता हूं:

"कि सूची 1 (द्वितीय सप्ताह) के संशोधन संख्या 10 में प्रस्थापित भाग 4 की कंडिका 10 की–

(i) उप-कंडिका (1) में '5000' और '4000' अंकों के स्थान में क्रमश: '3000' और '2000' रखा जाये; और

(ii) उप-कंडिका (2) में 'without' शब्द के स्थान में on शब्द रखा जाये।"

श्रीमान, मैंने यह संशोधन इस कारण पेश किया है कि मुझे ऐसा अनुभव होता है कि न्यायाधीशों के लिये हम बहुत अधिक वेतन की व्यवस्था कर रहे हैं। डॉ. अम्बेडकर ने डोमिनियनों के न्यायाधीशों के वेतनों को उद्धृत किया था। जब तक हम आस्ट्रेलिया और कनाडा की औसत आय को ध्यान में नहीं लायेंगे तब तक हमारे मन में एक भ्रमपूर्ण धारणा घर कर जायेगी। मैं यह जानना चाहूंगा कि एक भारतीय और आस्ट्रेलिया या कनाडा निवासी की औसत आय में क्या अन्तर है।

एक और तर्क जो बहुधा उन लोगों द्वारा प्रस्तुत किया जाता है जो न्यायाधीशों के लिये ऊंचे वेतन के पक्ष का समर्थन करते हैं वह यह है कि फेडरल संविधान में उन्हें महत्वपूर्ण भाग लेना है। यह कहा गया है कि न्यायाधीश लोगों की स्वतंत्रता के संरक्षक हैं और इस कारण उच्च वेतन पाने के वे हकदार हैं। गौरव का प्रश्न भी इसके अन्तर्गत आ जाता है। ये कुछ ऐसी बातें हैं जिनके आधार पर उच्च वेतन का प्रश्न उठाया जाता है। मैं इन आधारभूत विचारों के विवरणपूर्ण वाद विवाद में प्रवेश करूंगा जो मुझे प्रमाणहीन प्रतीत होते हैं।

यदि यह संविधान सभा एक भारतीय की औसत आय के आधार को नहीं मानती है तो वह राज्य की जड़ों को खोखला करेगी। इस देश में लोगों का पहले ही से यह विश्वास है कि हमारे जीवन के तथ्यों पर बिना विचार किये भारत सरकार ने न्यायाधीशों और राज्यपालों को समस्त सम्भाव्य सुविधायें दे रखी हैं। उसने मुट्ठी भर लोगों को सब तरह के भत्ते दे रखे हैं जिनको मुख्य राज्यपाल, प्रधान मंत्री, मंत्री, महालेखा परीक्षक इत्यादि के भिन्न-भिन्न पदों पर रखा गया है। क्या मैं सविनय यह निवेदन कर सकता हूं कि इस देश का जन साधारण राज्य के इन पदाधिकारियों को उपेक्षित दृष्टि से देखता है जो उच्च वेतन पा रहे हैं। मैं इस बात के पक्ष में नहीं हूं कि ऊंचे वेतन दिये ही न जायें। मैं इस बात के पक्ष में हूं कि जहां तक विदेशी विशेषज्ञों और प्रौद्योगियों का संबंध है वे जितना चाहें उतना उनको दिया जाये परन्तु जहां तक उन लोगों का संबंध है जो इस देश में रहते हैं, जहां तक उन लोगों का सम्बन्ध है जो कांग्रेस में हैं उनको देश के लिये कुछ त्याग करना चाहिये।

क्या मैं यह समझ लूं कि स्वतंत्रता प्राप्त कर लेने के बाद उन सब सिद्धान्तों को तिलांजलि दे दी जाये जिनके हम समर्थक थे? क्या उन सिद्धान्तों का परित्याग कर दिया जाये, उनकी उपेक्षा की जाये और उनकी हंसी उड़ाई जाये? दूरदर्शी राजनीतिज्ञों और लोक सेवकों को इस तथ्य को ध्यान में रखना चाहिये कि हमारे मन में आर्थिक समानता की प्रेरणा इतना उग्र तथा प्रबल रूप धारण कर चुकी है कि उसकी उपेक्षा सरलता से नहीं की जा सकती। इस सभा का कोई अन्य सदस्य जितना जानता है उतना ही मैं जानता हूं कि वर्त्तमान समय में आर्थिक समानता की सब बातें काल्पनिक हैं पर आप यह नहीं कह सकते कि यह एक ऐसा विचार है जिसका वास्तविक आधार कोई नहीं है। आप 5000 तथा 6000 रुपये वेतन की व्यवस्था कर रहे हैं परन्तु गांवों के जन साधारण के लिये क्या है? आप यह कहते हैं कि यह लोकतंत्रात्मक सरकार है। क्या आप ने जनता से पूछ लिया है? क्या आप जनता से पूछना चाहते भी हैं? मैं यह निवेदन करता हूं कि मैं उन वकीलों के मत का समर्थक नहीं हूं जो यह कहते हैं कि हमारे देश की राजनीति में न्यायपालिका को एक बहुत ही महत्वपूर्ण कार्य करना है। यह सत्य है कि प्रत्येक व्यक्ति जीवन में स्वयं अपनी महत्ता को वास्तविकता से अधिक आंकता है। एक वकील सदैव यही सोचता है कि समाज में एक बड़ा लाभदायक काम हम करते हैं। मैं यह चाहूंगा कि ये व्यक्ति जिन्होंने महात्मा गांधी की पुस्तक नहीं पढ़ी (मैं "हिन्द स्वराज" का उल्लेख कर रहा हूं जो प्रत्येक कांग्रेसी के लिये राजनीति की धर्मपुस्तक है) वे उस अध्याय को देखें जिसमें उन्होंने वकीलों और न्यायाधीशों के प्रति अपने विचार प्रकट किये हैं।

मेरा विचार यह है कि इस अन्तर्वर्ती काल में न तो विधान मंडल और न न्यायपालिका को महत्वपूर्ण कार्य करना है वरन् कार्यपालिका को महत्वपूर्ण कार्य करना है। 19वीं शताब्दि में विशेषकर अमरीका में न्यायपालिका ने महत्वपूर्ण कार्य किया पर जिस परिस्थिति में हम आज हैं उसके अनुसार इस देश में न्यायपालिका का भविष्य अच्छा नहीं है। न्यायपालिका एक ऐसे समाज में महत्वपूर्ण कार्य करती है जहां विधिवाद की भावना का प्राधान्य होता है जहां राज्य की जड़ें दृढ़ होती हैं और जहां क्रान्तिकारी उत्पात नहीं होते हैं। भारत में इसके विपरीत तथ्य हैं।

[श्री ब्रजेश्वर प्रसाद]

हमारी आर्थिक व्यवस्था तेजी के साथ अवनत होती जा रही है, प्रति दिन आन्तरिक क्रान्ति का भय उग्ररूप धारण करता चला जा रहा है और क्षितिज में विदेशी युद्ध के संकटपूर्ण मेघ छाये हुये हैं। मैं यह नहीं समझ पाता हूं कि न्यायपालिका किस प्रकार हमारे संविधान की संरक्षिका होगी, लोगों के जीवन और स्वातंत्र्य की वह किस प्रकार रक्षा कर सकेगी जब कि लोग दुष्टता करने और राजविद्रोह की शरण लेने पर उतारू हैं।

एक और तर्क जो बहुधा प्रस्तुत किया जाता है वह यह है कि आपको इतना वेतन और भत्ता देना चाहिये कि न्यायाधीश अपने ऐश्वर्य का निर्वाह कर सकें। यह पूरा का पूरा विचार अभ्रद्रता से परिपूर्ण है। इस देश के लोगों का आदर्श सादा जीवन उच्च विचार रहा है। ऐश्वर्य का सम्बन्ध धन से नहीं है। केवल पश्चिम में ही यह विचारधारा प्रचलित है। पर विद्वान मनुष्य हमारे विचारों की उपेक्षा करते हैं। हममें से कुछ लोग जो अपने पुराने आदर्श और पुरानी परम्परा पर आरूढ़ हैं वे इस बात पर जोर देंगे कि हम सादा जीवन और उच्च विचार के पुराने आदर्श पर आरूढ़ हैं और आरूढ़ रहेंगे यद्यपि हम यह भली भांति जानते हैं कि हमारी बात सुनी नहीं जायेगी।

इस सम्बन्ध में मैं एक बात कहूंगा जो कि यद्यपि पूर्ण रूप से संगत नहीं है। लोग यह पूछ सकते हैं कि संविधान सभा के सदस्यों के भत्ते के बारे में क्या विचार हैं। मैं 45 रुपये प्रति दिन के पक्ष में नहीं हूं। मैं यह चाहता हूं कि हमें तीसरे दर्जे का दिल्ली बिना किराये जाने का एक पत्र दे दिया जाया करे जिसके कारण हम यहां सभा में उपस्थित हो सकें। हम चाहते हैं कि सरकार हमारे लिये एक निवास-स्थान की व्यवस्था करे जिसमें हम विधान निर्माता की हैसियत से रह सकें और कृत्य कर सकें। हम यह चाहते हैं कि यह सरकार हमारे लिये केवल जेल के खाने की व्यवस्था करे और इससे अधिक हम एक पाई भी नहीं चाहते हैं।

***डॉ. पी.एस. देशमुखः** क्या आप जेल का खाना खा रहे हैं?

***श्री ब्रजेश्वर प्रसादः** इस विषय पर मैं बहुत गंभीर हूं। मुझे विश्वास है कि यह प्रश्न इस सभा या दूसरी सभा में उठाया जायेगा। यदि मैं इस विषय पर और अधिक कुछ कहूं तो सभा के समक्ष इस समय जो विषय है उसके प्रति वह कहना उपयुक्त नहीं होगा।

***डॉ. पी.एस. देशमुखः** क्या आप जेल में खाना खा रहे हैं?

***श्री ब्रजेश्वर प्रसादः** लोगों की आर्थिक दशा का ऐश्वर्य से कोई सम्बन्ध नहीं है। जिन लोगों को इस देश में सबसे अधिक सम्मान प्राप्त हुआ है वे सन्त लोग हैं न कि लखपती। एक न्यायाधीश का ऐश्वर्य वह जो कुछ काम करेगा उस पर निर्भर करेगा बशर्ते कि वह उस कार्य को सेवा और त्याग की भावना से करे। ऐश्वर्य जो कुछ वेतन और भत्ते हम उसे देंगे उस पर निर्भर नहीं करेगा। ऐसे लोग भी हैं जो न्यायाधीश के लिये उच्च वेतन के पक्ष में हैं। वे कहते हैं कि कोई अच्छा वकील न्यायाधीश होना स्वीकार न करेगा जब तक आप उसे

उचित वेतन और भत्ता न देंगे अतः जब तक आप उसे उच्च वेतन का प्रलोभन नहीं देंगे तब तक वह न्यायाधीश के पद को स्वीकार करने के लिये प्रस्तुत नहीं होगा। श्रीमान, हम ऐसे न्यायाधीश नहीं चाहते हैं जिनको जब तक उचित वेतन और भत्ते न मिलें तब तक वे काम ही न करें। जो लोग भाड़े के टट्टू होते हैं वे अविश्वसनीय होते हैं। यदि वे तब तक काम नहीं कर सकते जब तक कि 5000 रुपये वेतन न दिया जाये तो वे हमारे स्वातंत्र्य के रक्षक किस प्रकार हो सकते हैं? जहां तक वकीलों का संबन्ध है किसी एक सीमा से अधिक कमाने से रोकने के लिये हमें कुछ न कुछ करना चाहिये। हमें कुछ ऐसी विधियां पार करनी चाहिये जिनसे 1000 रुपया प्रति मास से अधिक अर्जन करना उनके लिये असंभव हो जाये।

***श्री महावीर त्यागीः** आप का संशोधन क्या है?

श्री ब्रजेश्वर प्रसादः मैं अपने संशोधन का समर्थन कर रहा हूं कि वेतन कम कर दिये जायें और वे हमारे जीवन के आर्थिक तथ्यों के अनुरूप हों। मैं इस प्रश्न पर अधिक विस्तार-पूर्वक तथा अधिक कुशलतापूर्वक विचार प्रस्तुत करना चाहूंगा, पर इसके लिये मेरे पास समय कम है, मैं स्वयं इस अनुच्छेद पर साधारण रूप में बोलना चाहता हूं।

मैं अनुसूची तथा राष्ट्रपति के वेतन की ओर निर्देश करता हूं। मेरे मित्र प्रो. शिब्बन लाल सक्सेना द्वारा पेश किये गये संशोधन का मैं समर्थन करता हूं। मैं इस संशोधन का इस कारण समर्थन करता हूं कि मुझे ऐसा प्रतीत होता है कि इस संविधान के अधीन प्रथम राष्ट्रपति ही अन्तिम राष्ट्रपति होगा। इस आधार पर मैं ये बातें कह रहा हूं। यदि मैं समझता कि यह संविधान आने वाले कुछ काल तक रहेगा, कि कांग्रेसी ही नहीं बल्कि गैर कांग्रेसी भी भारतीय संघ का राष्ट्रपति बन सकेगा तो शायद मैं यह बातें नहीं कहता जिन्हें मैं कहने जा रहा हूं। यह वास्तव में बड़े ही आश्चर्य और असमंजस का विषय है कि हमारे विश्वासप्रद नेता राजगोपालाचार्य के समान व्यक्ति सरदार पटेल जैसे व्यक्ति जिसने सब कुछ बलिदान कर दिया है आप जैसे महान व्यक्ति धन की बात मन में ला सकते हैं। मैं जानता हूं कि ये महान आत्मायें धन की बात अपने मन में नहीं ला सकती हैं। श्रीमान, मैं जानता हूं कि आप या कांग्रेस हाई कमान्ड का कोई सदस्य राष्ट्रपति होगा।

***अध्यक्षः** आपको व्यक्ति विशेष के सम्बन्ध में कुछ नहीं कहना चाहिये।

***श्री ब्रजेश्वर प्रसादः** मैं किसी व्यक्ति विशेष का उल्लेख नहीं कर रहा हूं। मैं यह कह रहा हूं। कि कांग्रेस हाई कमान्ड का कोई न कोई सदस्य राष्ट्रपति होगा।

***अध्यक्षः** आपको यह अनुमान करने की भी आवश्यकता नहीं है।

***श्री महावीर त्यागीः** लो कमान में से कोई क्यों नहीं?

***श्री ब्रजेश्वर प्रसादः** मेरी यह धारणा है कि कांग्रेस हाई कमान का कोई सदस्य, जिसने अपने समस्त जीवन भर बिना वेतन और भत्ते के कार्य किया है, बड़ी खुशी से बिना वेतन और भत्ते के संघ के राष्ट्रपति के रूप में कार्य करेंगे। मुझे खेद है मैं केवल वेतन का ही उल्लेख कर रहा हूं न कि भत्ते का। मुझे

[श्री ब्रजेश्वर प्रसाद]

यह प्रतीत होता है कि यदि हम यह साहस का कदम उठायें तो इससे कांग्रेस की प्रतिष्ठा फिर स्थापित हो जायेगी। इसका मनोवैज्ञानिक महत्व है। कांग्रेस के शत्रु मेरे इस विचार को पसन्द नहीं करेंगे। वे ऐसे विचार को अव्यवहार्य समझेंगे। पर कांग्रेसियों की क्या हालत है? हमें दूसरों से कमर कसने के लिये कहने का कोई अधिकार नहीं है। जब तक हम अपने आवरण ठीक न कर लें तब तक अंहिसा और सत्य की बातचीत हम किस मुंह से कर सकते हैं।

***अध्यक्ष:** मैं समझता हूं कि बहुत-सी बातें दुहराई जा रही हैं। अन्य सदस्यों ने ये बातें कही हैं और आप भी कह चुके हैं। मैं माननीय सदस्य को यह स्मरण कराना चाहूंगा कि इस विषय को और राज्यों के विषय में हमें आज समाप्त करना है।

***श्री ब्रजेश्वर प्रसाद:** मैं दो बातें और कहना चाहता हूं। मैं इसलाम के महान खलीफाओं का उदाहरण देना चाहूंगा। मैं चाहता हूं कि हमारा राष्ट्रपति महान उमर और अबू बक्र के पदचिन्हों पर चले। गांधी जी बड़े प्रेम से इनका उदाहरण दिया करते थे। क्या हम कुछ यूरोप की विचारधारा की बलिवेदी पर एशिया के इन सिद्धान्तों की भेंट चढ़ा रहे हैं? मैं सभा का ध्यान उस पत्र की ओर आकर्षित करूंगा जिसे गांधीजी ने अपने घुटनों पर लार्ड इर्विन को लिखा था: उन्होंने रोटी मांगी थी और एवज में मिले पत्थर।

***अध्यक्ष:** श्री कामत का संशोधन संख्या 167 इस पेश किये गये संशोधन के अन्तर्गत आ जाता है। श्री कामत संशोधन संख्या 168 तथा अन्य संशोधनों को पेश कर सकते हैं।

***श्री एच.वी. कामत:** श्रीमान, मैं प्रस्ताव पेश करता हूं:

"कि सूची 1 (द्वितीय सप्ताह) के संशोधन संख्या 10 में प्रस्थापित भाग 4 की कंडिका 10 की उपकंडिका (3) को अपमार्जित किया जाये।"

"कि सूची 1 (द्वितीय सप्ताह) के संशोधन संख्या 10 में प्रस्थापित भाग 4 की कंडिका 11 की उपकंडिका (2) को अपमार्जित किया जाये।"

"कि सूची 1 (द्वितीय सप्ताह) के संशोधन संख्या 10 में प्रस्थापित भाग 4 की कंडिका 11 की उपकंडिका (3) में 'Every such Judge' (प्रत्येक ऐसे न्यायाधीश) शब्दों के स्थान में 'Every Judge of a High Court' (उच्च न्यायालय के प्रत्येक न्यायाधीश) शब्द रखे जायें।"

संशोधन संख्या 168 में प्रस्थापित भाग 4 की कंडिका 10 की उप-कंडिका (3) को अपमार्जित करने का प्रयास है। इसी प्रकार संशोधन संख्या 171 प्रस्थापित भाग 4 की कंडिका 11 की उपकंडिका (3) को अपमार्जित करने का प्रयास है।

इस भाग की कंडिका 11 की उप-कंडिका (3) के संबंध में अन्तिम संशोधन न्यूनाधिक रूप में शाब्दिक है।

"न्यायाधीशों द्वारा किराया न देने के सम्बन्ध में" के पद या खंड को अपमार्जित करने वाला संशोधन संख्या 167, जैसा कि श्रीमान आप ने कहा है, मेरे माननीय मित्र श्री ब्रजेश्वर प्रसाद द्वारा पेश किये गये संशोधन के अन्तर्गत आ जाता है।

अन्तिम संशोधन को सर्वप्रथम लेते हुए अर्थात् संशोधन संख्या 173 को—चूंकि वह छोटा-सा संशोधन है मसौदा समिति का ध्यान, मैं जिस रूप में वह पद है उसके अनुसार उसके अस्पष्ट अर्थ की ओर आकर्षित करता हूं। कंडिका 11 की उप-कंडिका (3) में "प्रत्येक ऐसे न्यायाधीश" पद का प्रयोग किया गया है और इस भाग की कंडिका 10 की उप-कंडिका (4) में "सर्वोच्च न्यायालय का प्रत्येक न्यायाधीश" पद का प्रयोग किया गया है। यदि "प्रत्येक ऐसे न्यायाधीश" यह पद, जो कंडिका 11 की उप-कंडिका (3) में है, इस सभा द्वारा स्वीकार कर लिया जाता है तो, उसका यह अर्थ होगा कि उसका निर्देश केवल उन लोगों के लिये होगा जो इस कंडिका 11 की उप-कंडिका (2) में निर्दिष्ट है। मुझे ऐसी कोई बात नहीं दिखाई देती है कि यह कंडिका 10 की उप-कंडिका (4) की भाषा के अनुरूप क्यों न हो जिसमें उच्चतम न्यायालय का न्यायाधीश निर्दिष्ट है। यह ठीक तथा उचित है कि इस पद में इस प्रकार का रूप भेद कर दिया जाये कि वह स्पष्ट रूप से उच्च न्यायालय के प्रत्येक न्यायाधीश को निर्दिष्ट करे न कि केवल "प्रत्येक ऐसे न्यायाधीश" को। अन्यथा इसका यह गलत अर्थ लगाया जा सकता है कि इसका निर्देश केवल उन न्यायाधीशों से है जो कंडिका (2) में निर्दिष्ट हैं।

मैं आशा करता हूं कि मेरे इस संशोधन में विरोध करने के लिये डॉक्टर अम्बेडकर को कोई बात नहीं मिलेगी। और मेरे इस शाब्दिक तथा औपचारिक संशोधन को स्वीकार करने का वे मार्ग खोज निकालेंगे।

श्रीमान, मेरा पहला संशोधन जो श्री ब्रजेश्वर प्रसाद के संशोधन के अन्तर्गत आ गया है, न्यायाधीशों को अपने निवास-स्थानों का किराया न देने के उपबन्ध को अपमार्जित करने का प्रयास करता है। मुझे आश्चर्य है कि न्यायाधीशों के साथ अपने संविधान में इतनी उदारतापूर्वक व्यवहार क्यों किया जाता है। यदि मेरे माननीय साथी डॉक्टर अम्बेडकर द्वारा पेश किये गये रूप में उस अनुसूची को देखें तो उनको यह विदित होगा कि न्यायाधीशों से संबंधित भाग 4 लगभग डेढ़ पृष्ठों में है और राष्ट्रपति, राज्यपाल, अध्यक्ष और उपाध्यक्ष संबंधी अन्य बातें एक या दो कंडिकाओं में रख दी गई हैं। सभा को यह भी याद होगा कि इस अनुसूची पर भाषण देते हुए डॉ. अम्बेडकर ने इस अनुसूची में निर्दिष्ट राष्ट्रपति तथा अन्य महानुभावों के बारे में भाषण देने से पूर्व न्यायाधीशों से संबंधित भाग को लिया। यद्यपि मैं मसौदा समिति के किसी सदस्य की निन्दा नहीं करता हूं पर मुझे ऐसा प्रतीत होता है कि मसौदा समिति जिसमें वकीलों का प्राधान्य है ही, उसके लिये न्यायाधीशों के प्रति दया भाव दिखाना शायद अनिवार्य हो गया और कुछ द्वेषपूर्ण

[श्री एच.वी. कामत]

समालोचक यह भी कहें कि हममें से कुछ भावी भारत के न्यायाधीशों के पक्ष में रहना चाहते हैं और उनकी सहानुभूति चाहते हैं।

***अध्यक्ष:** कृपया निन्दापूर्ण बातें न कहें।

***श्री एच.वी. कामत:** मेरे ऐसे विचार नहीं हैं, पर सभा के बाहर ऐसी द्वेषपूर्ण आलोचना के लिये हम स्वयं अवसर देते हैं, और इस कारण मैंने सोचा कि किराया न देने का यह उपबन्ध प्रतिष्ठात्मक नहीं है और संविधान की प्रतिष्ठा को गिराता है। यदि सभा इस संविधान के अनुच्छेद 48 पर ध्यान देगी जो स्वीकार किया जा चुका है तथा इस सभा द्वारा पारित अनुच्छेद 135 पर भी ध्यान देगी तो उसे यह विदित होगा कि गणराज्य के राष्ट्रपति को और राज्य के राज्यपाल को बिना किराये के निवास-स्थान नहीं दिया गया है। मेरा अभिप्राय यह है कि यह बात विशिष्ट रूप से संविधान में नहीं है। राज्यपालों और राष्ट्रपति से संबंध रखने वाले अनुच्छेदों में यह कहा गया है कि राष्ट्रपति या राज्यपाल के लिये पदावास होगा। उन अनुच्छेदों में केवल यही कहा गया है और किराया देने या न देने का उनमें कोई उल्लेख नहीं है। सभा से मैं यह पूछता हूं कि क्या यह कहना हमारे लिये गौरवहीन बात नहीं है कि ऐसे उच्च पदस्थ व्यक्ति अपने गृह के लिये किराया नहीं देंगे? हमने उस कल्याणकारी उपबंध को स्वीकार कर लिया है कि कोई भी उच्च पदस्थ व्यक्ति, चाहे वह कितने ही उच्च पद पर क्यों न हो, आयकर देने से मुक्त नहीं रहेगा, जैसा कि अब तक गवर्नर जनरल रहता था। जब कि गरीब से गरीब मजदूर तक अपने छोटे से मकान का एक रुपया या कुछ अधिक किराया देता है तो एक न्यायाधीश अपने मकान का किराया क्यों न दे। मुझे विश्वास है कि कोई भी न्यायाधीश इस साधारण सुविधा की मांग नहीं करेगा। मैं यह नहीं समझ पाता हूं कि डॉ. अम्बेडकर ने किराये संबंधी इस उपबंध को जो कि इस सभा और इस संविधान के लिये इतना अपमान जनक है क्यों इस सभा में पेश करने का प्रयास किया है।

इसके बाद वेतन पर आइये, मैं उनसे झगड़ा करना नहीं चाहता हूं क्योंकि उच्चतम न्यायालय के न्यायाधिपति को 5000/- रुपये मिलेंगे और अन्य न्यायाधीशों में से प्रत्येक को 4000/- रुपये मिलेंगे और छोटे न्यायाधीश को 3500/- रुपये मिलेंगे। पर जो कुछ मैं नहीं समझ पाया वह यह है कि फेडरल न्यायालय के वर्तमान पदधारी न्यायाधीशों को और उच्च न्यायालय के न्यायाधीशों को वही वेतन प्राप्त करने का हक होगा जो उन्हें मिल रहा है। उस दिन माननीय वल्लभभाई पटेल ने सेवा की शर्तें, वेतन, निवृत्ति वेतन, तथा राज्य के सचिव आईसीएस और शायद भारतीय आरक्षी सेवा तथा ऐसी अन्य सेवाओं संबंधी ऐसे ही विशेषाधिकारों को बनाये रखने के पक्ष का समर्थन किया था। इस सभा ने उनके तर्क और निवेदन को उस विशेष अनुच्छेद को पार कर के स्वीकार किया था और वह ठीक ही था क्योंकि अगस्त 1947 में सरकार द्वारा उन सेवाओं को प्रत्याभूति दी गई थी।

मैं यह नहीं जानता हूं कि उच्च न्यायालय के न्यायाधीशों को, फेडरल न्यायालय के न्यायाधीशों को और महालेखा-परीक्षक को इस प्रकार की प्रत्याभूति दी गई है या नहीं कि जब यह संविधान प्रवृत्त होगा उनका वेतन और सेवा की अन्य शर्तें सुरक्षित रहेंगी। यदि सरकार ने ऐसी प्रत्याभूति दे दी है तब तो मुझे कुछ भी नहीं कहना है। सरकार में हमारा पूर्ण विश्वास है और हम यह नहीं चाहते कि सरकार अपने वचनों से हटे और यदि उसने उच्च न्यायालय तथा फेडरल न्यायालय के न्यायाधीशों को कोई ऐसा वचन दे दिया है तब तो बात दूसरी है। अन्यथा मुझे ऐसी कोई बात नहीं दिखाई देती है कि हम इस अनुसूची में एक इस प्रकार का विशेष खंड या कंडिका क्यों रखें कि वर्तमान पदधारियों को पूर्ववत वेतन मिलता रहेगा। मुझे विश्वास है कि यदि हम उच्च न्यायालय या फेडरल न्यायालय में सेवा करने वाले न्यायाधीशों से कुछ पूछें तो जैसे वे देशभक्त हैं और अपने देश की भरसक सेवा करने के लिये इच्छुक हैं उनमें से अधिकांश इस विशेष रियायत की मांग नहीं करेंगे। यदि एक या दो न्यायाधीश इस विशेष रियायत की मांग करते हैं यद्यपि इसमें मुझे संदेह है तो मैं समझता हूं कि जब सरकार द्वारा इन व्यक्तियों को कोई प्रत्याभूति नहीं दी गई है तो इन चन्द व्यक्तियों के लिये संविधान में उपबन्ध नहीं होना चाहिये। संविधान समूचे देश, उसके महानुभावों, उसकी जनता, उसके पदाधिकारी, तथा लोक सेवक इत्यादि इत्यादि के लिये है न कि कुछ विशिष्ट व्यक्तियों के लिये। यदि कुछ चन्द व्यक्ति इस संविधान के अधीन देश की सेवा करने के लिये राजी नहीं हैं तो अपनी नीति के विरुद्ध उन चन्द व्यक्तियों के लिये उपबन्ध बनाने के कार्य को न तो हम करेंगे और न हमें करना चाहिये। असैनिकों के पक्ष में ठीक कहा गया था और सभा द्वारा इस कारण स्वीकार कर लिया गया था कि उन असैनिकों को सरकार द्वारा प्रत्याभूति दी गई थी परन्तु जहां तक मैं जानता हूं उच्च न्यायालय और फेडरल न्यायालय के न्यायाधीशों को वेतन और सेवा की शर्तों के सम्बन्ध में कोई प्रत्याभूति नहीं दी गई है। श्रीमान, इसी कारण मैंने संशोधन संख्या 168 और 171 को पेश करने का प्रयास किया है। जिनका संबंध फेडरल न्यायालय और उच्च न्यायालय के न्यायाधीशों के पदों पर वर्तमान पदधारियों से है।

श्रीमान, इन वेतनों के बारे में एक बात और है। अपने माननीय मित्र श्री त्यागी से मैं पूर्णतया सहमत हूं कि राज्य के सर्वोच्च पदाधिकारी राष्ट्रपति, न्यायाधीश और राज्य के मन्त्रियों को सच्चे त्यागी होना चाहिये। उनको गीता के उपदेशानुसार मन और आत्मा से सच्चा त्यागी होना चाहिये। गीता में कहा गया है:

अनाश्रितः कर्मफलं कार्य कर्म करोति यः।
सः सन्यासी च योगी च न निरग्निर्न चाक्रियः।

किसी मनुष्य को जो वेतन मिल रहा है वह उसकी कसौटी नहीं है वरन् कसौटी तो यह है कि वह उस वेतन के मोह में है या नहीं। यदि वह 'अपरिग्रह' की भावना से प्रेरणा प्राप्त करता है उच्चतर उद्देश्य के लिये किसी भी समय अपने पद को त्यागने के लिये तैयार है तो वह सच्चा त्यागी है। सच्चा सन्यासी है।

[श्री एच.वी. कामत]

उसे इसी भावना से सेवा करनी चाहिये। यद्यपि मैं उस सीमा तक तो नहीं जाऊंगा कि 'सर्वे गुणा कांचन मा श्रयन्ते, पर मुझे ऐसा प्रतीत होता है कि पूर्व काल के समान इस आधुनिक संसार में प्रत्येक व्यक्ति, उसका मन और उसकी आत्मा उन शारीरिक परिसीमाओं द्वारा प्रतिबन्धित हैं जो उसके शरीर और जीवन को बनाये रखने के लिये आवश्यक हैं। उसे ऐसी स्थिति में रखना है कि उसे अभाव न खटके; उसे ऐसी स्थिति में रखना है कि उसे भय न सताये; उसे ऐसी स्थिति में रखना है कि वह अपने आपको सुरक्षित समझे। इसीलिये वेतन दिये जाते हैं और दिये जाने चाहियें।

डॉ. अम्बेडकर ने इन वेतनों को स्वीकार करने के लिये कहा है और संयुक्त राज्य अमरीका, कनाडा, तथा अन्य देशों से कुछ अंक उद्धृत किये हैं। मेरे माननीय मित्र श्री ब्रजेश्वर प्रसाद ने यह ठीक प्रश्न उठाया है कि इन वेतनों का राष्ट्रीय आय अथवा उन देशों की प्रति व्यक्ति की आय से क्या संबंध या अनुपात है। मैं इस विषय में नहीं जाना चाहता हूं। डॉ. अम्बेडकर वाद विवाद का उत्तर देते हुए इस विषय पर कुछ प्रकाश डालेंगे। मैं जो कुछ कहना चाहूंगा वह यह है। यह खबर है कि हमारे मंत्रियों ने अपने वेतनों में स्वेच्छा से 15 प्रतिशत की कटौती स्वीकार कर ली है। यदि यह सत्य है तो यह एक बड़ा ही प्रशंसनीय विनिश्चय है। श्री ब्रजेश्वर प्रसाद ने हमारे अपने भत्ते और वेतन का उल्लेख किया था। मैं अपने भत्तों में कमी करने के पक्ष में हूं। परन्तु मैं यह भी सुझाव दूंगा कि भत्तों के इस विषय.....

***डॉ. पी.एस. देशमुखः** बशर्ते कि सब यह स्वीकार करें।

***श्री एच.वी. कामतः** मैं यही कहने वाला थाः बशर्ते कि सब लोक सेवक अपने वेतनों में से स्वेच्छा से कटौती स्वीकार करें; मैं यह सुझाव दूंगा कि यद्यपि यह सब जानते हैं कि इस सभा के सदस्यों को कोई वेतन नहीं मिलता है, केवल भत्ता मिलता है, परन्तु अन्तर्कालीन संसद के समवेत होने पर या उससे शीघ्र संसद के सदस्यों के वेतन के दुःखद प्रश्न को अधिक पुष्ट आधार पर रखें और सदस्यों को वेतन दिया जाये। और जब वे यहां आयें तो उनको साधारण भत्ता मिले। यह अधिक अच्छा होगा।

***डॉ. पी.एस. देशमुखः** और अधिक बुद्धिमत्तापूर्ण होगा।

***श्री एच.वी. कामतः** जी हां, अधिक बुद्धिमत्तापूर्ण भी। आखिर सदस्यों को दूर-दूर से यहां आना पड़ता है न कि मंत्रियों के समान जो दिल्ली में ठहरते हैं और दिल्ली में ही अपना काम करते हैं।

अन्त में मैं एक बार और अपने उस संशोधन का उल्लेख करूंगा जो किराया न देने वाले उपबन्ध को अपमार्जित करने का प्रयास करता है। यदि इसको शामिल किया ही जाये तो मैं यह भी सुझाव दूंगा कि उसमें हम एक सामान सहित गृह का उपबन्ध भी शामिल कर दें और यह और रखें कि एक न्यायाधीश के गृह

में कितने स्नानागार होंगे, कितने शयनागार होंगे। अन्यथा न्यायाधीश के लिये बिना किराये के गृह के संबंध का यह निर्देशन जिस संविधान पर हम विचार कर रहे हैं उसकी प्रतिष्ठा के अनुकूल नहीं है। इस उपबंध को निकाल देना चाहिये, विशेष कर इस बात पर विचार करते हुए कि राष्ट्रपति और राज्यपालों के संबंध के अनुच्छेदों में ऐसा कोई उपबन्ध नहीं है जो उन्हें भाटक देने से वंचित करे।

समाप्त करने से पूर्व मैं मसौदा समिति से और सभा से हार्दिक निवेदन करूंगा कि वे इस बात का ध्यान रखें कि पहले चाहे कितना ही वेतन नियत किया गया हो परन्तु हम एक स्वतन्त्र गणराज्य के रूप में, स्वतन्त्र भारत के रूप में,—जिसे राष्ट्रमंडल में उच्च स्थान प्राप्त करना है, जिसे मनुष्य की उन्नति, स्वातन्त्रय और कल्याण के संघर्ष में महत्वपूर्ण भाग लेना है—मानव का जो मूल्य आज है उसका पुनर्मूल्यन करने के लिये सच्चे और विनम्र रूप में कम से कम प्रयत्न तो करें, और यदि मैं कह सकता हूं तो यह कहूंगा कि मनुष्य को नया मार्ग तथा नया प्रकाश दिखाये जो नवमूल्यन और नव प्रकाश के लिये इस युद्ध से पीड़ित और जर्जरित संसार में भटक रहा है।

***श्री प्रभु दयाल हिम्मतसिंहका:** (पश्चिमी बंगाल: जनरल): अध्यक्ष महोदय, मैंने संशोधन 212 और 213 की सूचना दी है जो कार्यक्रम के पत्र में, पृष्ठ 4 पर है:

> "कि सूची 1 (द्वितीय सप्ताह) के संशोधन संख्या 10 में प्रस्थापित भाग 4 की कंडिका 11 की उप-कंडिका (2) में 'Thirty first day of October, 1948' शब्दों के पश्चात् 'or as Chief Justice before the tenth day of October, 1949' शब्द प्रविष्ट किये जायें।"

और कुछ संशोधन सुझाये गये हैं। डॉ. अम्बेडकर द्वारा स्थिति की व्याख्या सुन लेने के पश्चात् कि उन लोगों को जिनकी नियुक्ति 31 अक्तूबर सन् 1948 के बाद हुई थी उनको यह संकेत दिया जा चुका था कि उनका वह वेतन संविधान सभा के विनिश्चय के अधीन है और यदि संविधान सभा ने उनका वेतन कम करने का विनिश्चय किया तो उस कमी को उन्हें मानना पड़ेगा, अत: उसे मैं इस संशोधित रूप में पेश करना नहीं चाहता हूं। मुझे कंडिका 11 के खंड (2) में एक कमी मालूम होती है और यह स्पष्ट है कि वह कमी इस कारण है कि मसौदा समिति का उस कमी की ओर ध्यान नहीं गया। वह खंड इस प्रकार है "प्रत्येक व्यक्ति जो 31 अक्तूबर, 1948 से पूर्व किसी प्रान्त के उच्च न्यायालय में स्थायी प्रकार से न्यायाधीश के रूप में नियुक्त था और इस संविधान के प्रारम्भ पर अनुच्छेद 310 के खंड (1) के अधीन तत्स्थानी राज्य के उच्च न्यायालय का न्यायाधीश हो गया तो उस को यदि वह ऐसे प्रारम्भ से ठीक पहले इस कंडिका की उप-कंडिका (1) में उल्लिखित दर से अधिक वेतन पाता था तो विशेष वेतन के रूप में ऐसी राशि पाने का हक होगा जो कि इस प्रकार उल्लिखित वेतन तथा ऐसे प्रारम्भ से ठीक पहले उसे मिलने वाले वेतन के अन्तर के बराबर है।" इससे यह विचार पैदा होता है कि जो व्यक्ति 31 अक्तूबर, 1948 के पूर्व न्यायाधीश

[श्री प्रभु दयाल हिम्मतसिंहका]

नियुक्त हो चुका था वह इस संविधान के प्रारम्भ पर उतना ही वेतन प्राप्त करता रहेगा तो उसे मिल रहा था। परन्तु यदि कोई व्यक्ति 31 अक्तूबर के पश्चात् नियुक्त हुआ था तो वह इस खंड के अधीन आयेगा अर्थात् उसका वेतन कम हो जायेगा और उसे 3500/- रुपया मिलेगा। यदि ऐसा कोई न्यायाधीश जिसकी नियुक्ति 31 अक्तूबर, 1948 के पूर्व हुई थी, उसी प्रान्त में न्यायाधीश बना रहता है और इस अरसे में अक्तूबर 1948 के पश्चात् उसका वेतन बढ़ जाता है तो यदि वह उसी प्रान्त में रहता है तो उसे अधिक वेतन मिलता रहेगा। परन्तु यदि ऐसा न्यायाधीश किसी अन्य प्रान्त में जाने के लिये राजी हो जाता है और नये प्रान्त में दूसरा घर चलाने के एक और दायित्व को ग्रहण कर लेता है तो उसे इस अतिरिक्त वेतन का लाभ नहीं होगा। यदि किसी न्यायाधीश का बंगाल से नागपुर को तबादला हो जाता है तो उसे इस अतिरिक्त वेतन का लाभ नहीं होगा। मुझे यह स्पष्ट प्रतीत होता है कि मसौदा बनाने में अवश्य कोई न कोई त्रुटि है। अन्यथा मसौदा लेखक का यह अभिप्राय कदापि नहीं हो सकता है कि जो व्यक्ति उसी प्रान्त में बना रहता है उसे अधिक वेतन या अन्तर मिले और यदि उसका तबादला हो जाता है या वह दूसरे प्रान्त में जाना स्वीकार कर लेता है तो उसे अधिक वेतन न मिले। वह न्यायाधीश रहता है और अक्तूबर 1948 के पूर्व वह न्यायाधीश के रूप में नियुक्त हुआ था। अतः आपकी अनुमति से मैं यह सुझाव देता हूं:

"कि सूची 6 (द्वितीय सप्ताह) के संशोधन संख्या 211 में प्रस्थापित भाग 4 की कंडिका 11 की उपकंडिका (2) में 'in the corresponding State' शब्दों के स्थान में 'in a State for the time being specified in Part I of the first Schedule, शब्द रखे जायें।"

अतः इस संशोधन का प्रभाव यह होगा–

"कि कंडिका 11, उपकंडिका (2) में 'चतुर्थ पंक्ति में आये हुए 'corresponding State' शब्दों के स्थान में 'in a State for the time being specified in Part I of the first Schedule' शब्द रखे जायें।"

ऐसी कोई बात नहीं है कि किसी न्यायाधीश को जिसने दूसरे प्रान्त में जाना स्वीकार कर लिया है इस प्रकार दंडित क्यों किया जाये जब कि कोई न्यायाधीश जो अपने ही प्रान्त में बना रहता है और उसे तबादले तथा अतिरिक्त व्यय का कष्ट नहीं उठाना पड़ता है उसे अधिक मिले। मैं समझता हूं कि यदि इस बात पर समुचित विचार किया जाये तो मेरे संशोधन को स्वीकार करने में मसौदा समिति को कोई आपत्ति नहीं होनी चाहिये। इससे उसी कोटि के मनुष्यों में असमानता दूर हो जायेगी और ऐसे दो व्यक्तियों में जो भेद विभेद किया जा रहा है वह समाप्त हो जायेगा। यह संशोधन किसी विशेष व्यक्ति का पक्ष ग्रहण करने हेतु नहीं है। इसके अन्तर्गत वे सब न्यायाधीश आ जायेंगे जो इस कोटि के हैं। यदि एक प्रान्त से दूसरे प्रान्त को तबादला हो जाता है तो यदि उनको अधिक वेतन मिल

रहा है तो वे सब इस कोटि में आ जायेंगे। यदि ऐसा कोई मामला नहीं है तो नियम के अधीन उस का किसी पर प्रभाव नहीं पड़ेगा। अन्यथा यह असमानता या भूल या शायद एक प्रकार का अनजाने का अन्याय है जो किसी भी ऐसे व्यक्ति के साथ हो सकता है जिसने दूसरे प्रान्त में जाना स्वीकार कर लिया है।

व्यक्तिगत रूप से वेतनों के सम्बन्ध में मुझे खुशी होती यदि सब न्यायाधीशों को वही वेतन मिलते रहते जो उन्हें मिल रहे थे क्योंकि प्रत्येक व्यक्ति जानता है कि न्यायाधीशों को प्रलोभन से दूर रहना चाहिये। और उन्हें किसी वस्तु का अभाव नहीं होना चाहिये। आखिर उन्हें बड़े महत्वपूर्ण कर्तव्य का निर्वहन करना पड़ता है और उनके मार्ग में इतने प्रलोभन आते हैं कि यदि उन्हें किसी बात का अभाव हुआ तो वे प्रलोभन में आकर भ्रष्ट हो जायेंगे। यह सत्य है कि धन ही एक ऐसी वस्तु नहीं है जो व्यक्ति को प्रलोभित करे। आचरण और अन्य वस्तुएं भी आवश्यक हैं—कांग्रेस पक्ष ने न्यायाधीश के लिये 3500/- रुपये का वेतन नियत करना स्वीकार किया है इस बात पर मेरा कोई झगड़ा नहीं है—पर श्री ब्रजेश्वर प्रसाद और श्री कामत के संशोधनों का मैं अवश्य विरोध करता हूं जो न्यायाधीशों का वेतन और घटा कर 3000/- रुपये या 2000/- रुपये रखना चाहते हैं और मुझे आशा है कि जिस संशोधन को मैंने पेश किया है वह स्वीकार कर लिया जायेगा।

***श्री आर.के. सिधवा:** मेरे नाम से कुछ संशोधन हैं।

***अध्यक्ष:** इसको मैं रखूंगा।

संशोधन संख्या 266 और 269 का आशय पूरा हो ही चुका। संशोधन संख्या 272 श्री सक्सेना।

***प्रो. शिब्बन लाल सक्सेना:** श्रीमान, मेरा संशोधन जिसको श्री कामत भी पेश कर चुके हैं। वह इस विशेष वेतन के उपबन्ध को हटाने के उद्देश्य से था। इस बात से मेरा सैद्धान्तिक विरोध है। इस समय हम नया संविधान बना रहे हैं और इस अनुच्छेद में हम उन वेतनों के लिये उपबन्ध बना रहे हैं जो भिन्न-भिन्न पद धारण करने वाले पदधारियों को स्वतन्त्र भारत में मिलने चाहियें। परन्तु मसौदा समिति द्वारा पेश किये गये इस संशोधन में हम यहां यह व्यवस्था कर रहे हैं कि न्यायाधीशों और महालेखा परीक्षक को वर्तमान वेतनों का वह भाग विशेष वेतन के रूप में मिलता रहेगा जो नये वेतनों से अधिक है। यह तर्क प्रस्तुत किया गया है कि इन पदाधिकारियों को कोई ऐसी प्रत्याभूति दी गई थी कि उनके पद धारण करने की अवधि में उनका वेतन कम नहीं किया जायेगा। मैं समझता हूं कि यह प्रत्याभूति फेडरल न्यायालय के न्यायाधीशों के लिये थी न कि उच्चतम न्यायालय के न्यायाधीशों या अन्य न्यायाधीशों के लिये। मुझे स्वयं यह प्रतीत होता है कि यदि उच्चतम न्यायालय का भावी न्यायाधिपति और उच्च न्यायालय के न्यायाधीश और महालेखा-परीक्षक भविष्य में यहां जिस वेतन की व्यवस्था की है उससे संतुष्ट रहेंगे तो मुझे ऐसी कोई बात नहीं दिखाई देती कि वे न्यायाधीश जो उच्चतम न्यायालय और उच्च न्यायालय के नये ढांचे में स्थान प्राप्त करेंगे और महालेखा परीक्षक अपने वेतनों को नये पदधारियों के लिये नियत वेतन के अनुसार नियत कराने में क्योंकर

[प्रो. शिब्बन लाल सक्सेना]

संतुष्ट न हों। इस समय मुख्य न्यायाधिपति को 7000/- रुपया मिलता है और न्यायाधीशों को 5500/- रुपया मिलता है। नये उपबन्ध के अनुसार मुख्य न्यायाधिपति को केवल 5000/- रुपया मिलेगा। मान लीजिये बेंच के एक न्यायाधीश की मुख्य न्यायाधिपति के रूप में पदोन्नति की जाती है तो उसे 5000/- रुपये ही मिलेंगे। तो यह एक असमानता और होगी। न्यायाधीश के रूप में उसे 5500/- रुपया मिलता है। मुख्य न्यायाधिपति के रूप में उसे 5000/- रुपया ही मिलेगा। इन सब असमानताओं की व्यवस्था हम नहीं कर सकते हैं। जो कुछ मैं चाहता था वह यह था कि जो आश्वासन दिया गया था वह फेडरल न्यायालय के वर्तमान न्यायाधीशों के लिये था और जब हम फेडरल न्यायालय को मिटा रहे हैं और नये संविधान के अधीन उच्चतम न्यायालय की व्यवस्था कर रहे हैं तो मैं समझता हूं कि उस प्रत्याभूति का कुछ अर्थ है। साथ ही साथ मेरा यह भी ख्याल है कि ये पदाधिकारी भी इस विशेष वेतन को अच्छे रूप में स्वीकार नहीं करेंगे जो केवल उन्हीं को मिलेगा और उनके उत्तराधिकारियों को नहीं मिलेगा।

मैं एक क्षण के लिये भी यह नहीं सोच सकता हूं कि मुख्य न्यायाधिपति, न्यायाधीश या महालेखा परीक्षक को समुचित वेतन न मिले। मैं वास्तव में यह अनुभव करता हूं कि इन पदाधिकारियों को समुचित वेतन मिले क्योंकि उन से संबंध रखने वाले उपबन्धों में हमने उन पर कई शर्तें लगा दी हैं। उनको 65 या 60 वर्ष की आयु में सेवा से निवृत्त होना चाहिये। उच्चतम न्यायालय के न्यायाधीशों को सेवा से निवृत्त होने के पश्चात् कहीं भी वकालत नहीं करने दिया जायेगा। ये सब कड़ी शर्तें हैं और मैं यह समझता हूं कि उच्च न्यायालय के न्यायाधीश ऐसे होने चाहिये जो स्वतंत्र हों, जो ऐसा निर्णय करने में न झिझकें जो तत्कालीन शक्तियों के विरुद्ध हों और इस प्रयोजन के लिये मैं समझता हूं कि उनके लिये कोई अभाव नहीं होना चाहिये और कार्यपालिका की कृपा प्राप्त करने के लिये भटकने की उन्हें आवश्यकता नहीं होनी चाहिये। अतः उन्हें अच्छे वेतन देने की प्रथा बहुत कल्याणकर है और मैं भी उन उपबन्धों का अनुमोदन करता हूं। मैं उनके निवृत्ति वेतनों के प्रश्न को भी विनिश्चित करना चाहूंगा। इंग्लैंड और अमरीका में उच्चतम न्यायालय के न्यायाधीशों की निवृत्ति की कोई आयु नहीं है। वे 80 वर्ष की, 90 वर्ष की आयु तक रहते हैं और इस आयु पर भी वे बहुत अच्छे न्यायाधीश होते हैं। हम जानते हैं कि उनका निवृत्ति वेतन उनके वेतन का लगभग तीन चौथाई होता है। ये बहुत बड़े लाभ हैं और इनके कारण वे निर्णय देने में पूर्ण स्वतंत्र रहते हैं। अतः न्यायाधीशों को ऊंचे वेतन देने के विरोध में मैं नहीं हूं। इसके साथ ही साथ मैं यह भी जानता हूं कि इन लोगों को एक विशेष जीवन स्तर को बनाये रखना पड़ता है। उनको समाज से पृथक रहना पड़ता है और जनता से घुलमिल कर रहने के विशेषाधिकार से वे वंचित रहते हैं। वे पार्टियों और आमोद प्रमोदों में भाग नहीं ले सकते हैं जिनका आनन्द मंत्री महोदय उठाते हैं, अतः उनके लिये जो वेतन की व्यवस्था की गई है उससे मुझे विरोध नहीं है। पर मैं नहीं समझता हूं कि प्रथम पदधारियों और उनके उत्तराधिकारियों में कोई भेद विभेद या अन्तर हो। उन सबको समान वेतन मिलने दीजिये और यदि आप यह समझते हैं कि जो दिये गये वेतन समुचित नहीं हैं तो आप वेतनों को बढ़ा सकते हैं, पर यह न हो कि उच्चतम न्यायालय के वर्तमान न्यायाधिपति अधिक वेतन प्राप्त करें और उसका उत्तराधिकारी कम। यह नहीं करना चाहिये।

मुझे यह कहना है कि गणराज्य का लेखा तब तक सही नहीं होगा जब तक महालेखा-परीक्षक असाधारण रूप से स्वतंत्र तथा दृढ़ प्रकृति का व्यक्ति न हो। अत: मैं समझता हूं कि उसका वेतन अच्छा होना चाहिये और ठीक उसी आधार पर होना चाहिये जिस पर उच्चतम न्यायालय के मुख्य न्यायाधिपति का वेतन है। अत: वर्तमान पदधारियों और उनके उत्तराधिकारियों के वेतन में मैं कोई अन्तर नहीं चाहता हूं।

***अध्यक्ष:** श्री सिधवा। मैंने आपके संशोधन संख्या 94 और 96 देख लिये हैं। मैं नहीं समझता हूं कि उनकी अब आवश्यकता है। वे मूल उपबन्ध पर थे जो संशोधन संख्या 92 में दिया हुआ है। डॉ. अम्बेडकर द्वारा पेश किये गये संशोधन ने अब उस संशोधन का स्थान ग्रहण कर लिया है और ये संशोधन वहां ठीक नहीं बैठते हैं। मैं समझता हूं कि संशोधन इतने ही हैं। श्री अल्लादी कृष्णास्वामी ऐयर।

***श्री अल्लादी कृष्णास्वामी अय्यर** (मद्रास: जनरल): अध्यक्ष महोदय, नये संविधान के अधीन उच्च न्यायालयों और उच्चतम न्यायालय के न्यायाधीशों के वेतनों के संबंध के अनुच्छेद का समर्थन करते हुए माननीय डॉ. अम्बेडकर द्वारा पेश की गई प्रस्थापना के समर्थन में मैं कुछ शब्द कहना चाहूंगा। इस समय प्रस्थापित किया गया वेतन का परिमाण लगभग वही है जो मसौदा समिति ने गत वर्ष फरवरी में प्रकाशित संविधान के मसौदे में प्रस्थापित किया गया था—सिवा इसके कि उच्चतम न्यायालय के न्यायाधीशों के वेतन में कुछ अन्तर है—बिना किराये के मकान की व्यवस्था की गई है और सहायक न्यायाधीशों के वेतन में कुछ कमी है। न्यायाधीशों के वेतन नियत करने में न्यायपालिका की प्रतिष्ठा, कार्य कुशलता और स्वतंत्रता को बनाये रखने के महत्व के प्रति समिति पूर्णतया सचेष्ट थी—विशेषकर एक फेडरल संविधान के अन्तर्गत जहां कि उच्चतम न्यायपालिका को केवल नागरिक और नागरिक के तथा राज्य और नागरिक के परस्पर झगड़ों को निर्णय करने के लिये ही आमंत्रित नहीं किया जाता है वरन् महान संविधानिक महत्व के उन प्रश्नों के विनिश्चय करने के लिये भी आमंत्रित किया जाता है जिन पर संविधान की भावी प्रगति निर्भर करती है। कनाडा, आस्ट्रेलिया, दक्षिणी अफ्रीका और अमरीका के विशाल महाद्वीप के वेतनों के परिमाण तथा अंग्रेजों के शासन के अधीन भारत में के वेतनों पर और इसके साथ-साथ अपने देश की सामान्य निर्धनता को ध्यान में रखते हुए कुछ कमी करने की आवश्यकता पर भी समिति ने ध्यान दिया।

वेतन पुनरीक्षण करने के किसी प्रश्न में हम जिस प्रशासी व्यवस्था से सूत्रपात कर रहे हैं उसकी पूर्णतया उपेक्षा नहीं कर सकते हैं। यदि हम नये अभिकर्त्ता के रूप में एक नई कार्यपालिका और न्यायपालिका के साथ एक दम किसी संविधान को आरम्भ करते तब तो हमें मन चाहा क्षेत्र मिल सकता था और अपने देश की आर्थिक तथा अन्य परिस्थितियों का ध्यान रखते हुए हम जो चाहते उस वेतन की व्यवस्था कर सकते थे। यद्यपि सैद्धांतिक रूप में हमें जैसा चाहें वैसा संविधान बनाने का पूर्ण स्वातंत्र्य है और जो वेतन हम चाहें उसकी व्यवस्था करने की स्थिति हमें प्राप्त है परन्तु हमें यह स्मरण रखना चाहिये कि हम वर्तमान आधार पर यह ढांचा खड़ा कर रहे हैं। जो यह विशेष सुझाव मसौदा समिति ने दिया है उसके देने में वह इन विचारों से प्रभावित हुई। बिना किराये के मकानों का जो थोड़ा सा परिवर्तन किया गया है वह दिल्ली की अजीब हालत के कारण है। यह अनुभव

[श्री अल्लादी कृष्णास्वामी अय्यर]

किया गया कि बिना किराये के मकान की व्यवस्था करने की आपकी स्थिति होनी चाहिए। न्यायाधीशों को निवास स्थान के लिये कुछ दिनों प्रतीक्षा करने की बजाय यह सोचा गया कि यह अधिक अच्छा होगा कि न्यायाधीशों के लिये पदावास की व्यवस्था हो। इस कारण न्यायाधीशों के निवास स्थान का उपबन्ध रखा गया है।

मैं यह भी कह दूं कि मसौदा समिति इस बात के प्रति भी पूर्णतया सचेष्ट थी। उदाहरणार्थ उस प्रणाली के प्रति जो यूरोप महाद्वीप में प्रचलित थी जहां कि न्यायाधीशों के वेतन इंग्लैंड में और उन देशों में दिये जाने वाले वेतनों से बहुत कम हैं जहां ब्रिटेन के विधि शास्त्र का प्रभाव है। हमने उस प्रणाली को ठीक ही अंगीकार किया है जिसे न्याय प्रशासन की ब्रिटिश प्रणाली कहा जाता है। यूरोप महाद्वीप में बेंच और बार पृथक पृथक संस्थायें हैं। बार में से न्यायाधीशों की भरती बिल्कुल नहीं होती है, तथा फ्रांस में के सेशन न्यायालय के अध्यक्ष का उच्चतम वेतन लगभग 1300/- रुपये है। इसी प्रकार से जर्मनी में उच्चतम वेतन 1300/- रुपये है। परन्तु वहां वे वास्तव में असैनिक सेवा का एक अंग होते हैं। हम इस बात के लिये उत्कंठित थे कि न्यायपालिका की स्वतंत्रता बनी रहे और हमने यह अनुभव किया कि ऐसी स्वतंत्रता बार में से भरती करने से प्राप्त की जा सकती है और हमें इस तथ्य पर ध्यान देना पड़ा कि आप वृत्तिजीवी महानुभावों से बेंच पर स्थान स्वीकार करने की तब तक आशा नहीं कर सकते जब तक कि उनके लिये अच्छे पारिश्रमिक की व्यवस्था न की जाये। साथ ही साथ हमें देश की आर्थिक दशा की भी उपेक्षा नहीं करनी चाहिये और न्यायाधीशों को एक पृथक वर्ग के रूप में देश के साधारण सेवा वर्ग से पूर्णतया पृथक रूप में भी नहीं समझ सकते हैं। इन सब बातों पर ध्यान देते हुए न्यायपालिका की स्वतंत्रता, उनके सम्मान तथा प्रतिष्ठा को बनाये रखने के लिए अन्य निकायों से परामर्श कर मसौदा समिति ने अन्त में वेतनों की इस योजना को प्रस्तुत किया।

कुछ और बातें हैं जिनकी ओर वाद-विवाद में ध्यान दिलाया गया है। पहली बात यह है कि गत वर्ष नवम्बर से पूर्व नियुक्त हुए न्यायाधीशों के लिये किसी विशेष उपबन्ध की कहां आवश्यकता है? जहां तक उन असैनिक सेवाओं और न्यायाधीशों का संबंध है जिनकी नियुक्ति अपने अपने पदों पर भारतीय डोमीनियन अधिनियम के लागू होने से पहले हो गई थी उनका वेतन डोमीनियन अधिनियम के एक विशेष उपबन्ध द्वारा सुरक्षित किया गया था जिसकी ओर उस दिन असैनिक सेवाओं पर वाद-विवाद होते समय ध्यान दिलाया गया था। सामान्यतया मुख्य न्यायाधिपति के सहित न्यायाधीशों को डोमिनियन संविधान के लागू होने के बाद तक तथा गत वर्ष फरवरी में संविधान के प्रकाशित होने के बाद तक भी उसी पुराने वेतन पर नियुक्त करते चले आये; और हमको यह बताया गया है कि गत नवम्बर के पश्चात् मंत्रीमंडल ने भविष्य में नियुक्त होने वाले व्यक्तियों को यह ज्ञात करा दिया था कि उनको उस नये वेतन के अधीन अपने-अपने पदों को स्वीकार करने के लिये तत्पर होना चाहिये जो संविधान सभा द्वारा स्वीकार किया जायेगा। इन बातों के कारण उन लोगों की उपलब्धियों को सुरक्षित रखने के लिये जिनकी नियुक्ति गत वर्ष नवम्बर से पूर्व हुई थी एक विशिष्ट उपबन्ध रखा गया है। यह ठीक है कि उन न्यायाधीशों के लिये जिनकी नियुक्ति नवम्बर से पूर्व

हुई थी इस वेतन के अन्तर को हम भत्ते के रूप में रखें क्योंकि साधारण सिद्धांत यह है कि वेतन का वही परिमाण सब न्यायाधीशों पर प्रयुक्त हो। जिनकी नियुक्ति न्यायाधीश के रूप में नवम्बर से पूर्व हुई थी उन्होंने अपना कार्य एक निश्चित समझौते पर संभाला था और इस कारण समिति ने यह ठीक समझा कि वेतनों में जो अन्तर है उसे विशेष भत्ते के रूप में समझ लिया जाये। यह उस सिद्धांत पर जोर देने के लिये है कि सामान्य तथा स्वीकृत वेतन वही है जिसकी व्यवस्था संविधान के साधारण उपबन्धों में की गई है। इसमें सन्देह नहीं कि इसके कारण कुछ असमानतायें आ गई हैं। उनको भुगतना पड़ेगा उनके लिये कोई और चारा नहीं है। उदाहरणार्थ उच्च न्यायालय के न्यायाधीश को यदि बाद में उच्चतम न्यायालय का न्यायाधिपति नियुक्त किया जाता है। तो उच्च न्यायालय के न्यायाधीश के रूप में उसे जो वेतन मिलता था उससे उसे कम वेतन मिलेगा यद्यपि यह बात है कि उसे दिल्ली में बिना किराये के निवास गृह का अधिकार है। और फिर एक ही प्रकार के कृत्यों के निर्वहन करने वाले न्यायाधीशों को उसी न्यायालय में भिन्न-भिन्न वेतन मिलेंगे, पर इन असमानताओं का किसी प्रकार से भी इस अनुच्छेद में निहित सिद्धांत पर प्रभाव नहीं पड़ सकता है। यह एक कारण है कि प्रस्थापित रूप में इस अनुच्छेद में जैसा कि मैं कह चुका हूं वेतनों के अन्तर को विशेष भत्ते के रूप में रखा गया है। जहां तक न्यायाधीशों का संबंध है मैं इन बातों की ओर निर्देश करना चाहता था।

वाद-विवाद के समय एक यह भी प्रश्न उठाया गया था कि संविधान में एक यह विशेष उपबन्ध होना चाहिये कि राष्ट्रपति के वेतन पर आय कर होगा। जब तक संविधान में उन्मुक्ति नहीं दी गई है तब तक संविधानिक विधि का यह स्वीकृत सिद्धांत है कि प्रत्येक पदाधिकारी पर चाहे वह राष्ट्रपति हो, या मुख्य न्यायाधिपति उच्च न्यायालय का न्यायाधीश हो या मंत्री हो आयकर लगेगा। यदि आप यह एक विशेष उपबन्ध बनाते हैं कि राष्ट्रपति के वेतन पर आयकर लगेगा तो इस तर्क को प्रस्तुत करने का मार्ग खुल जायेगा कि जहां तक अन्य पदाधिकारियों का संबंध है उन पर आयकर नहीं होगा। संविधान का यह सिद्धांत तो नहीं है। अतः राष्ट्रपति के वेतन की 10,000/- रुपये तक वृद्धि करते हुए इस तथ्य का कोई निर्देशन जान बूझकर नहीं किया गया है कि उस पर आयकर लगेगा। जब तक संविधान किसी व्यक्ति को विशेष रूप से आयकर के प्रवर्त्तन से वंचित न करे तब तक प्रत्येक पदाधिकारी पर प्रत्येक उच्च पदस्थ व्यक्ति पर चाहे वह कितने ही उच्च पद पर क्यों न हो आयकर लगेगा। यह दूसरी बात है जिसका मैं जिक्र करना चाहता था।

इसके पश्चात् जहां तक राष्ट्रपति के भत्ते का संबंध है, उसके भत्ते के प्रश्न को लेने की आवश्यकता नहीं है क्योंकि उस स्थिति की पूरी मालकिन संसद है। राष्ट्रपति को जिन भत्तों का हक होगा उसकी विवरण पूर्ण सूची से इस संविधान को और भी अधिक जटिल बनाने की अपेक्षा इस तथ्य का निर्देशन कर दिया गया है कि अभी राष्ट्रपति को उन भत्तों का हक है जो गवर्नर जनरल को मिल रहे थे। बाद में संसद को अधिकार होगा कि वह इस समूचे प्रश्न पर विचार करे और परिस्थिति, देश की आवश्यकता और राष्ट्रपति के पद के गौरव के लिये जैसे अपेक्षित हो वैसे भत्ते का पुनरीक्षण करें।

[श्री अल्लादी कृष्णास्वामी अय्यर]

इन चन्द शब्दों में, श्रीमान, डॉ. अम्बेडकर ने जिस रूप में इस अनुच्छेद को प्रस्तुत किया है उस रूप में मैं इसका समर्थन करता हूं।

***पंडित हृदय नाथ कुंजरू** (संयुक्त प्रांत: जनरल): अध्यक्ष महोदय, संविधान के मसौदे में यह उपबन्धित किया गया था कि राष्ट्रपति को 5000/- रुपया मासिक और राज्यपाल को 4,500/- रुपया मासिक वेतन मिले। उस समय यह प्रस्थापित किया गया था.....

***माननीय डॉ. बी.आर. अम्बेडकर:** राष्ट्रपति को 5,500/- रुपया मासिक।

***पंडित हृदय नाथ कुंजरू:** मेरे सामने संविधान का मसौदा है और उसमें से मैंने पढ़कर सुनाया है। इस कारण यह प्रस्थापित किया गया था कि मुख्य न्यायिक कृत्यकारियों के वेतन इन वेतनों से कम होने चाहिये। यह उपबन्धित किया गया था कि उच्चतम न्यायालय के मुख्य न्यायाधिपति को 5000/- रुपया मासिक मिले और उच्चतम न्यायालय के अन्य न्यायाधीशों को 4000/- रुपया मासिक मिले। यह भी उपबन्धित किया गया था कि उच्च न्यायालय के मुख्य न्यायाधीश को 4000/- रुपया मासिक और उच्च न्यायालय के किसी अन्य न्यायाधीश को 3500/- रुपया मासिक वेतन मिले। जहां तक उच्च न्यायालय का संबंध है हम सब यह जानते हैं कि सब प्रांतों में न्यायाधीशों का वेतन समान नहीं था। मध्य प्रांत, उड़ीसा और आसाम प्रांतों में वेतन कम थे। आसाम सबसे कम वेतन देता था। वह मुख्य न्यायाधीश को 4000/- रुपये और अन्य प्रत्येक न्यायाधीश को 3500/- रुपये देता था। अब वेतन के इसी परिमाण को उच्च न्यायालय के सब न्यायाधीशों के लिये संविधान में प्रस्थापित किया गया है।

डॉ. अम्बेडकर द्वारा हमारे सामने प्रस्तुत किये गये इस संशोधन में राष्ट्रपति और राज्यपालों के वेतन को बढ़ा दिया गया है। राष्ट्रपति का वेतन लगभग दुगना कर दिया गया है और राज्यपाल के वेतन में 1000/- रुपये बढ़ा दिये गये हैं परन्तु उच्च न्यायालयों और उच्चतम न्यायालय के न्यायाधीशों के वेतनों को उतना ही रखा है जितना संविधान के मसौदे में दिया गया था। केवल एक अपवाद किया गया है और वह प्रांतीय उच्च न्यायालयों के स्थायी न्यायाधीशों के लिये है। संशोधन में कहा गया है कि 31 अक्तूबर, 1948 के पूर्व किसी प्रांत की उच्च न्यायालय के न्यायाधीश के रूप में नियुक्त व्यक्ति इस संविधान के अनुच्छेद 310 के खंड (1) के अधीन संविधान के प्रारम्भ पर तत्स्थानी राज्य में उच्च न्यायालय का न्यायाधीश हो जाता है तो वेतन, छुट्टी और निवृत्ति वेतन संबंधी सेवा की शर्तों को उसे वही हक होगा जो हक उसे इस संविधान के प्रारम्भ के पूर्व था। अब एक संशोधन प्रस्थापित किया गया है कि 31 अक्तूबर, 1948 के पूर्व नियुक्त व्यक्तियों के लिये बनाये गये विशेष उपबन्ध का अपमार्जन किया जाये। मैं यह समझता हूं कि जिन लोगों की नियुक्ति 31 अक्तूबर, 1948 के पूर्व उच्च न्यायालयों के न्यायाधीशों के रूप में स्थायी प्रकार से की जायेगी उनके लिये एक अपवाद किया जा रहा है—मोटे रूप में यह कहा जा सकता है कि इस उपबन्ध को स्वाधीनता अधिनियम 1947 की धारा 10 के अनुरूप बनाया जा रहा है। उस धारा ने राज्य सचिव (सेक्रटरी ऑफ स्टेट) या सपरिषद राज्य सचिव द्वारा नियुक्त किये गये सब व्यक्तियों को भारत की असैनिक सेवाओं का हक दिया था और उच्चतम न्यायालय

तथा उच्च न्यायालयों के न्यायाधीशों को उन्हीं सेवा की शर्तों और अन्य अधिकारों के उपभोग करने का हक दिया था जिनका वे भारत शासन अधिनियम, 1935 के अधीन उपभोग कर सकते थे। डॉ. अम्बेडकर का संशोधन स्वाधीनता अधिनियम की धारा 10 से कुछ बातों में भिन्न है। स्वाधीनता अधिनियम में केवल उन लोगों को प्रत्याभूति दी थी जिनकी नियुक्ति स्थायी रूप से न्यायाधीश के पद पर 15 अगस्त, 1947 से पूर्व हो गई थी। डॉ. अम्बेडकर का संशोधन इस अधिकार को 31 अक्तूबर, 1948 तक नियुक्त किये गये व्यक्तियों तक विस्तृत करता है। इस प्रकार यह संशोधन स्वाधीनता अधिनियम की धारा 10 के उपबन्धों से आगे बढ़ जाता है। पर उस धारा के उपबन्धों का पालन करने में यह वह एक प्रकार से असमर्थ हो जाता है। उस धारा में यह निर्धारित किया गया था कि उच्च न्यायालय के न्यायाधीश के रूप में नियुक्त किया गया व्यक्ति चाहे वह किसी प्रांत में नियुक्त हो जिसमें वह अस्थायी या अतिरिक्त न्यायाधीश के रूप में सेवा कर रहा था अथवा किसी अन्य प्रांत में नियुक्त हो उसे सेवा की शर्तें और अन्य विशेषाधिकारों का वही हक होगा जो हक उसे 15 अगस्त 1947 के पूर्व था जिन लोगों की नियुक्ति राज्य सचिव या सपरिषद् राज्य सचिव द्वारा असैनिक सेवाओं में की गई थी उनके लिये स्वाधीनता अधिनियम द्वारा सृजित आभारों का पूर्णतया पालन किया गया है परन्तु उच्च न्यायालयों के न्यायाधीशों से संबंध रखने वाली प्रत्याभूतियों का एक उस रूप में सम्मान नहीं किया गया जिसको मैं बता चुका हूं।

अत: मैं समझता हूं कि श्री प्रभु दयाल हिम्मतसिंहका द्वारा पेश किये गये संशोधन के पक्ष में विचार करना उचित है। मान लीजिये कोई व्यक्ति संयुक्त प्रांत के उच्च न्यायालय में न्यायाधीश नियुक्त हो जाता है। और मान लीजिये कि 31 अक्तूबर, 1948 के पूर्व वह पटना उच्च न्यायालय का मुख्य न्यायाधीश हो जाता है। इस दशा में उसे 5000/- रुपये मासिक वेतन मिलने का हक नहीं होगा। ऐसा प्रतीत होता है कि डॉ. अम्बेडकर के संशोधन के अनुसार उसे केवल 4000/- रुपये मिलने का हक होगा जो वही वेतन है जिसका उसे संयुक्त प्रांत से पटना जाने से पूर्व मिलने का हक था। यह मुझे बिलकुल वांछनीय प्रतीत नहीं होता है। यदि आप 31 अक्तूबर, 1948 के पश्चात् स्थायी रूप से नियुक्त हुए न्यायाधीशों के लिये अपवाद करना चाहते हैं तो जिस प्रत्याभूति को आप देना चाहते हैं उसका पालन केवल शब्दों में ही नहीं वरन् भाव रूप में भी करिये। आपने एक बार किसी व्यक्ति को उच्च न्यायालय का स्थायी न्यायाधीश नियुक्त कर दिया तो यदि उसका कार्य संतोषजनक है तो वह पदवृद्धि की आशा कर सकता है। प्रत्येक न्यायाधीश मुख्य न्यायाधिपति या उच्चतम न्यायालय का न्यायाधीश नहीं बन सकता है पर कुछ न्यायाधीश बन सकते हैं, और मुझे ऐसी कोई बात दिखाई नहीं देती है कि योग्यता के आधार पर जिन न्यायाधीशों की पदवृद्धि की जाये उनको भारत शासन अधिनियम की धारा 10 के अधीन दी गई प्रत्याभूति से क्यों वंचित रखा जाये।

भावी न्यायाधीशों के संबंध में डॉ. अम्बेडकर ने संयुक्त राज्य अमरीका, आस्ट्रेलिया, कनाडा और दक्षिणी अफ्रीका में उच्च न्यायालय के न्यायाधीशों को दिये जाने वाले वेतनों का उल्लेख किया था। मुझे विश्वास है कि उन्होंने यह कहा था कि सिवा संयुक्त राज्य अमरीका के कोई भी देश भारत से अधिक वेतन न्यायाधीशों को नहीं देता था। यदि उन्होंने ऐसा कहा तो वे इस बात को भूल गये कि इंग्लैंड में उच्च न्यायालय के न्यायाधीशों को भारत के किसी भी

[पंडित हृदय नाथ कुंजरू]

न्यायालय के न्यायाधीशों से अधिक वेतन मिलता है। मोटे रूप में हम यह कह सकते हैं कि संयुक्त राज्य अमरीका और इंग्लैंड के अलावा डॉ. अम्बेडकर द्वारा बताये गये अन्य किसी देश में न्यायाधीशों को उस वेतन से अधिक वेतन नहीं दिया जाता है जो भारत वर्ष में है।

मैं यह नहीं जानता हूं कि कनाडा, दक्षिणी अफ्रीका और आस्ट्रेलिया में न्यायाधीशों का निवृत्ति वेतन क्या है। परन्तु न्यायाधीशों का वेतन निश्चित करने में हमें इन अधिकारों पर विचार करना पड़ेगा। संयुक्त राज्य अमरीका में मैं समझता हूं कि उच्चतम न्यायालय के न्यायाधीश का निवृत्ति वेतन उसके वेतन के बराबर है। इंग्लैंड में उच्च न्यायालय के न्यायाधीश का निवृत्ति वेतन उसके वेतन का 70 प्रतिशत है। भारत शासन अधिनियम 1935 के अधीन अनुमानत: उस न्यायाधीश का वेतन जिसने बारह वर्ष तक सेवा की है उसकी वार्षिक आय का तृतियांश है। जिस समय भारत शासन अधिनियम पार किया गया था उस समय इस बात को न्याययुक्त मानने का चाहे जो कुछ भी कारण हो परन्तु यह स्पष्ट है कि उच्च न्यायालय के न्यायाधीशों को अब अधिक निवृत्ति वेतन दिया जाना चाहिये। डॉ. अम्बेडकर ने जो कुछ कहा था उसे मैं पूरा नहीं सुन सका पर अपने भाषण में उनको इस बात का उल्लेख करते हुए मैंने नहीं सुना। भारत के विभिन्न उच्च न्यायालयों के मुख्य न्यायाधीशों और उच्चतम न्यायालय के न्यायाधीशों द्वारा भेजे गये ज्ञापन में वेतनों की कमी की निन्दा की गई है और न्यायाधीशों की यह सम्मति हो गई है कि न्यायाधीशों की निवृत्ति आयु और निवृत्ति वेतन की वृद्धि अब भी की जा सकती है। उच्च न्यायालय और उच्चतम न्यायालय के न्यायाधीश बड़े उत्तरदायित्व पूर्ण पदों को धारण करेंगे बल्कि यह कहना चाहिये कि वे संविधान के संरक्षक होंगे। अत: यह आवश्यक है कि उनके वेतन, सेवा की शर्तें और स्थिति ऐसी होनी चाहिये कि वे लोगों के लिये सम्माननीय होंगे, और अपने तथा अपने परिवार के निर्वाह करने की चिंता से मुक्त होकर वे अपने कर्त्तव्य का निर्वहन कर सकें।

उच्चतम न्यायालय और उच्च न्यायालयों के न्यायाधीशों के संबंध में श्री नज़ीरुद्दीन अहमद द्वारा पेश किये गये संशोधन के मैं व्यक्तिरूप से पक्ष में हूं। परन्तु इस विषय पर सभा का विनिश्चय चाहे जो कुछ भी हो मैं समझता हूं कि उनके वेतन की कमी को यदि किसी दृष्टिकोण से न्याययुक्त माना जाता है तो यह नितांत आवश्यक है कि उच्चतम न्यायालय और उच्च न्यायालयों के न्यायाधीशों का निवृत्ति वेतन बढ़ाया जाये। मैं यह नहीं जानता हूं कि मेरे माननीय मित्र डॉ. अम्बेडकर के इस विषय में क्या विचार हैं पर यदि वे यह नहीं समझते कि वर्तमान निवृत्ति वेतन संबंधी उपबन्धों में परिवर्तन होना चाहिये तो मुझे आश्चर्य होगा। मैं समझता हूं उच्चतम न्यायालय और उच्च न्यायालयों के न्यायाधीशों को अपने वेतन का दो तिहाई निवृत्ति वेतन के रूप में मिलने दिया जाये।

***अध्यक्ष:** जहां तक निवृत्ति वेतन का संबंध है क्या मैं यह बता सकता हूं कि जब तक संसद कोई अन्य उपबन्ध नहीं करती तब तक के लिये यह अन्तर्कालीन उपबन्ध है? यह विषय संसद के विचार पर छोड़ दिया गया है।

पंडित हृदय नाथ कुंजरू: वह बिल्कुल सच है, पर मैं यह चाहता था कि मेरे माननीय मित्र डॉ. अम्बेडकर इस विषय का भी उल्लेख करते जब उन्होंने अपने संशोधन की व्याख्या की थी। मैं यह जानता हूं कि न्यायाधीशों के निवृत्ति वेतन को नियत करते हुए संसद को एक विधि पार करनी होगी परन्तु यदि उत्तरदायित्व पूर्ण व्यक्ति यहां—और आज मसौदा समिति के सभापति से अधिक उत्तरदायित्वपूर्ण व्यक्ति अन्य कोई और नहीं है—इस सम्मति को प्रकट कर दे कि निवृत्ति वेतन बढ़ना चाहिये और वेतन का कम से कम दो तिहाई होना चाहिये तो मुझे विश्वास है कि इसका संसद पर प्रभाव पड़ेगा। परन्तु इस विषय को यदि यों ही छोड़ दिया जाता है और ऐसा कोई व्यक्ति, जिसकी सम्मत्ति को संसद महत्व दे, इसका उल्लेख नहीं करता है और माननीय सदस्यों को यह कल्पना करने दी जाती है कि वर्तमान निवृत्ति वेतन संबंधी उपबन्धों में परिवर्तन अपेक्षित नहीं है तो यह बहुत ही संदेहात्मक है कि संसद निवृत्ति वेतन बढ़ाने की ओर प्रवृत्ति दिखाये।

श्रीमान, इस प्रश्न का उल्लेख करने का यह कारण है। मैं इस वाद विवाद को अधिक देर तक जारी रखना नहीं चाहता हूं। मैं नहीं समझता हूं कि मसौदा समिति द्वारा किसी भी संशोधन के स्वीकार किये जाने की तनिक भी गुंजाइश हो। विगत दो वर्षों से इस सभा में वाद विवाद ने जो प्रणाली ग्रहण की है हम सब उससे परिचित हैं। कोई संशोधन चाहे कितना ही युक्ति युक्त रहा हो मसौदा समिति द्वारा स्वीकार नहीं किया गया है पर मैं आशा करता हूं कि मसौदा समिति के सभापति यह कहना अपनी प्रतिष्ठा के विरुद्ध नहीं समझेंगे कि उनकी सम्मति में उच्चतम न्यायालय और उच्च न्यायालयों के न्यायाधीशों के निवृत्ति वेतनों में वृद्धि होनी चाहिये।

***श्री एल. कृष्णास्वामी भारती** (मद्रास: जनरल): श्रीमान, अब इस विषय पर मत लिया जाये।

***अध्यक्ष:** प्रश्न यह है:

"कि अब इस विषय पर मत लिया जाए।"

प्रस्ताव स्वीकार किया गया।

***माननीय डॉ. बी.आर. अम्बेडकर:** श्रीमान, मैं जो कुछ कहना चाहता हूं वह यह है कि केवल तीन बातें उठाई गई हैं जिनका कुछ उत्तर अपेक्षित है। श्री कामत ने उच्चतम न्यायालय के न्यायाधीशों को बिना किराये के मकान देने वाले अनुसूची 2 में के उपबन्धों पर आक्रमण किया है। उच्चतम न्यायालय के न्यायाधीशों के लिये संविधान में मकान की व्यवस्था करने वाले इस प्रश्न को बड़ी सावधानीपूर्वक विचार करने के पश्चात् तय किया गया था। यह विचार किया गया है कि बहुत से न्यायाधीश जिनकी उच्चतम न्यायालय में नियुक्ति होगी वे इस देश के दूरवर्ती सिरों से राजधानी में आयेंगे और यह ठीक नहीं होगा कि उनके पद के अनुरूप मकान तलाशना उन पर ही छोड़ दिया जाये। यह मुख्य कारण था कि मसौदा समिति ने मकान की व्यवस्था करने के आभार को अपने ऊपर लिया।

बिना किराये के प्रश्न के संबंध में हमने सोचा कि उच्चतम न्यायालय के न्यायाधीशों के उस वेतन की कमी के लिये यह एक प्रकार का प्रतिकर है जिसकी

[माननीय डॉ. बी.आर. अम्बेडकर]

हमने फेडरल न्यायालय के न्यायाधीशों के वेतनों की तुलना में प्रस्थापना की है। व्यक्तिगत रूप में मुझे बड़ा आश्चर्य हुआ था जब कि मेरे माननीय मित्र श्री कामत ने इस बात पर उपहासपूर्ण टिप्पणी की थी क्योंकि यदि वे किसी व्यक्ति के लिये बिना किराये के मकान की व्यवस्था करने के विरोध में हैं तो मुझे उनसे यह आशा थी कि वे उन बिना किराये के मकानों के बारे में कुछ कहते जिनकी व्यवस्था हमने राष्ट्रपति तथा गवर्नर जनरल को भी की है।

***श्री एच.वी. कामतः** मैंने किराये का उल्लेख नहीं किया था और मैं यह भी नहीं जानता कि आया बिना किराये का मकान है या नहीं है।

***माननीय डॉ. बी.आर. अम्बेडकरः** मैं समझता हूं कि श्री कामत द्वारा उठाये गये इस विशिष्ट प्रश्न में कोई सार नहीं है।

वेतनों की राशि पर सभा में भिन्न-भिन्न प्रकार की सम्मतियां प्रकट की गई हैं। मेरे मित्र श्री शिब्बन लाल सक्सेना ने तो यहां तक कहा कि राष्ट्रपति को एक रुपये से अधिक नहीं मिले। मेरा विचार है कि इस पारिश्रमिक पर सिवा किसी घूमने वाले सन्यासी के अन्य कोई व्यक्ति राष्ट्रपति का कार्य करने के लिये नहीं मिलेगा, और मुझे इसमें कोई संदेह नहीं है कि एक घूमने वाले सन्यासी के अन्य गुण चाहे तो कुछ भी हों परन्तु संघ का राष्ट्रपति होने के लिये तो वह एक बिल्कुल ही अयोग्य व्यक्ति होगा।

न्यायाधीशों के वेतन के संबंध में दो प्रश्न उठाये गये हैं। सभा में कुछ व्यक्ति ऐसे हैं जिन्होंने यह कहा है कि अनुसूची में न्यायाधीशों का जो वेतन नियत किया गया है उससे उनका वेतन अधिक होना चाहिये। कुछ लोगों ने यह कहा है कि जो वेतनमान हमने नियत किया है वह देश के वेतन देने के सामर्थ्य से कोई संबंध नहीं रखता है। मेरे विचार से इस देश में हम जो वेतन नियत करें उसका लोगों की आय से संबंध हो इस विषय का नारा एक अच्छा राजनैतिक नारा है, पर मैं यह कहने के लिये उद्यत नहीं हूं कि यह व्यवहारिक राजनीति है। इस देश में तथा अन्य देशों में भी वेतन प्रदाय और मांग के नियम पर निर्भर होने चाहिये। दुर्भाग्यवश अथवा सौभाग्यवश विधान मंडल के सदस्य के रूप में कार्य करने के लिये बहुत से लोग मिल सकते हैं अतः उनके वेतन को हम बहुत कम परिमाण पर नियत करते हैं। सौभाग्यवश अथवा दुर्भाग्यवश उन लोगों का प्रदाय जो न्यायाधीश के रूप में कार्य कर सकते हैं बहुत ही संकुचित है। मैं यह तो नहीं कहता कि वे अलभ्य हैं। परन्तु वास्तव में यह बड़ी कठिनाई से मिलने वाली वस्तु है अतः हमें बाजार दर का मूल्य देना होगा। मुझे पूर्ण विश्वास है कि इस अनुसूची में नियत किये गये वेतन तत्कथित बाज़ार दर के मूल्य के अनुरूप है। अतः मैं नहीं समझता हूं कि जो वेतन हमने नियत किये हैं उन पर कोई बड़ा झगड़ा हो सकता है।

इसके बाद मेरे मित्र श्री हिम्मतसिंहका द्वारा पेश किये संशोधन पर मैं आता हूं। मैं यह कह देना चाहूंगा कि उनके और मेरे विचार में एक ही बात है और उनके मन में जो बात है उनके लिये मुझे असीम सहानुभूति है। पर वे यह चाहते हैं कि मैं एक व्यापक प्रस्थापना को स्वीकार कर लूं अर्थात् इस प्रस्थापना को जिसमें कहा गया है "भाग 1 में वर्णित किसी भी राज्य क्षेत्र में नियुक्त कोई न्यायाधीश।"

मैं समझता हूं कि इन खंडों में व्यापक निबन्धनों के संशोधन का पुर:स्थापन करना वांछनीय नहीं है क्योंकि 31 अक्तूबर, 1948 के पश्चात् प्रांतीय आधार पर न्यायाधीशों के वेतनों में अपने संविधान के उपबन्धों के कारण कोई अन्तर नहीं हो सकता। उच्च न्यायालय के क्षेत्र पर विचार किये बिना जिसके अन्तर्गत वह न्यायालय स्थित है सब न्यायाधीशों को एक आधार पर रख दिया गया है। अत: किसी असमानता को दूर करने के लिये कोई व्यापक उपबन्ध आवश्यक नहीं है क्योंकि ऐसी असमानता के दुबारा होने की संभावना नहीं है। असमानता इस कारण वर्तमान है कि भारत शासन अधिनियम में न्यायाधीशों के वेतन संबंधी कुछ उपबन्धों ने प्रांतों में परस्पर भेद विभेद कर दिये थे। मैं अपने मित्र से जो कुछ कहना चाहता हूं वह यह है कि मसौदा समिति यह आशा करती है कि इस विशेष दशा के लिये अन्य रीति से उपबन्ध कर दिया जायेगा। यदि यह हुआ तो इस विशेष संशोधन को स्वीकार करना आवश्यक नहीं होगा और इसके कारण जिन व्यक्तियों पर प्रभाव पड़ेगा उनको भी लाभ हो जायेगा। परन्तु यदि मसौदा समिति यह देखती है कि यह नहीं होगा तो मसौदा समिति ने यह अधिकार अपने लिये सुरक्षित रखा है कि उन विशेष व्यक्तियों की शिकायत को दूर करने के लिये एक विशेष संशोधन प्रस्तुत करे।

समाप्त करने से पूर्व मैं इस खंड में एक या दो वाक्यांश और पुर:स्थापित करने के हेतु आपकी अनुमति प्राप्त करने के लिये निवेदन करूंगा, जो भूल से रह गये हैं। मैं भाग 4, कंडिका 11 उपकंडिका (2) की ओर निर्देश करता हूं। सप्तम पंक्ति में 'shall' शब्द के पश्चात् मैं इन शब्दों को प्रविष्ट करना चाहूंगा:

'in addition to the salaries specified in sub-paragraph (1) of this paragraph.'

कंडिका 11 की उपकंडिका (3) के लिये मेरे पास एक संशोधन और भी है। प्रथम 'such' को मैं निकालना चाहूंगा और 'judge' शब्द के पश्चात् मैं यह जोड़ना चाहूंगा:

'of the High Court.'

***श्री एच.वी. कामत:** यह मेरा संशोधन है।

***माननीय डॉ. बी.आर. अम्बेडकर:** मैं उसे स्वीकार करता हूं, और अब मैं आशा करता हूं कि संशोधित रूप में सभा इस अनुसूची को स्वीकार करेगी।

***श्री आर.के. सिधवा:** राष्ट्रपति और राज्यपाल के वेतनों और भत्तों के संबंध के मेरे संशोधन के बारे में क्या विचार है?

***माननीय डॉ. बी.आर. अम्बेडकर:** उसे संसद निश्चित करेगी।

***अध्यक्ष:** अब मैं भागों के अनुसार अनुसूची पर के संशोधनों पर मत लूंगा। इस समय हम अनुसूची के भाग 1 पर हैं।

[अध्यक्ष]

प्रश्न यह है:

"कि सूची 6 (द्वितीय सप्ताह) के संशोधन संख्या 207 में प्रस्थापित भाग 1 की कंडिका 1 में '10000' अंक और '5500' अंक के पूर्व 'not more than' शब्द प्रविष्ट किये जायें।'

संशोधन अस्वीकार किया गया।

***अध्यक्ष:** प्रश्न यह है:

"कि सूची 6 (द्वितीय सप्ताह) के संशोधन संख्या 207 में प्रस्थापित भाग 1 की कंडिका 1 में '10,000 Rupees' शब्द और अंक के स्थान में '1 rupee' शब्द और अंक रखे जायें।'

संशोधन अस्वीकार किया गया।

***अध्यक्ष:** प्रश्न यह है:

"कि सूची 6 (द्वितीय सप्ताह) के संशोधन संख्या 207 में प्रस्थापित भाग 1 की कंडिका 1 में राष्ट्रपति और राज्यपाल के वेतन संबंधी अंकों के पश्चात् यह और जोड़ दिया जाये:–

'The salaries of the President and the Governor shall be subject to income tax.' "

संशोधन अस्वीकार किया गया।

***अध्यक्ष:** प्रश्न यह है:

"कि सूची 6 (द्वितीय सप्ताह) के संशोधन संख्या 207 में प्रस्थापित भाग 1 की 2 और 3 कंडिकाओं के स्थान में ये कंडिकायें रखी जायें:–

'There shall be paid to the President and to the Governor the following allowance:

'The President shall draw a lump sum of Rs. 1,35,000 per annum which shall include the cost of renewal, repair and maintenance of furniture and motor vehicles, also including sumptuary, contract and all other allowances.

'The President shall also draw Rs. 10,000 per annum as touring expenses.

'The Governors shall draw a lump sum of Rs. 15,000 per annum which shall include the cost of renewal, repair and maintenance of furniture and motor vehicles, also including sumptuary, contract and all other allowances.

'The Governors shall also draw Rs. 7,000 per annum as touring expenses.' "

संशोधन अस्वीकार किया गया।

***अध्यक्ष:** भाग 2 पर कोई संशोधन नहीं है। मैं भाग 3 पर आता हूं। संशोधन संख्या 264 ।

प्रश्न यह है:

"कि सूची 6 (द्वितीय सप्ताह) के संशोधन संख्या 210 के निर्देशानुसार भाग 3 की कंडिका 8 के स्थान में यह कंडिका रखी जाये:—

'8. There shall be paid to the Speaker and the Deputy Speaker of the provisional Parliament, such salaries and allowances as were payable to the Speaker and the Deputy Speaker of the Constituent Assembly of the Dominion of India immediately before the commencement of this Constitution.' "

संशोधन अस्वीकार किया गया।

***अध्यक्ष:** अब मैं भाग 4 पर आता हूं। संशोधन संख्या 265 ।

प्रश्न यह है:

"कि सूची 6 (द्वितीय सप्ताह) के संशोधन संख्या 211 में प्रस्थापित भाग 4 की कंडिका 10 की उपकंडिका (1) में–

(1) '5000' अंक के स्थान में '6000' अंक रखे जायें, और

(2) '8000' अंक के स्थान में '5000' अंक रखे जायें।"

संशोधन अस्वीकार किया गया।

***अध्यक्ष:** संशोधन संख्या 267 का भाग (3) पेश नहीं किया गया था। अत: मैं प्रथम दो भागों पर मत लूंगा।

प्रश्न यह है:

"कि सूची 6 (द्वितीय सप्ताह) के संशोधन संख्या 211 में प्रस्थापित भाग 4 की कंडिका 10 की उपकंडिका (3) में—

[अध्यक्ष]

(1) 'thirty first day of October 1948' शब्दों और अंक के स्थान में 'commencement of this Constitution' शब्द रखे जायें;

(2) 'commencement of this Constitution' शब्दों के स्थान में 'such commencement' शब्द रखे जायें।"

संशोधन अस्वीकार किया गया।

***अध्यक्ष:** प्रश्न यह है:

"कि सूची 6 (द्वितीय सप्ताह) के संशोधन संख्या 211 में प्रस्थापित भाग 4 की उपकंडिका 11 में–

(1) '4000' अंक के स्थान में '5000' अंक रखा जाये, और

(2) '3500' अंक के स्थान में '4000' अंक रखा जाये।"

संशोधन अस्वीकार किया गया।

***अध्यक्ष:** प्रश्न यह है:

"कि सूची 6 (द्वितीय सप्ताह) के संशोधन संख्या 211 में प्रस्थापित भाग 4 की कंडिका 11 की उपकंडिका (2) में–

(1) 'Thirty first day of October 1948' शब्दों और अंक के स्थान में 'commencement of this Constitution' शब्द रखे जायें;

(2) 'the commencement of this Constitution' शब्दों के स्थान में 'such commencement' शब्द रखे जायें।"

संशोधन अस्वीकार किया गया।

***अध्यक्ष:** संशोधन संख्या 270 का तीसरा भाग डॉ. अम्बेडकर द्वारा स्वीकार कर लिया गया है। जिस रूप में तीसरा भाग है। वह इस प्रकार है:

"इस अनुसूची के भाग 4 की कंडिका 11 की उपकंडिका (2) में 'specified in sub-paragraph 4 (1) of this paragraph shall' शब्दों के पश्चात् 'in addition to the salary specified in sub-paragraph (1) of this paragraph' शब्द जोड़ दिये जायें।"

***माननीय डॉ. बी.आर. अम्बेडकर:** मैं अपने शब्दों को रखना चाहूंगा।

***अध्यक्ष:** मैं समझता हूं शब्द तो वही हैं।

***पंडित हृदयनाथ कुंजरू:** वाद-विवाद समाप्त करने के प्रस्ताव के स्वीकार हो जाने के पश्चात् क्या डॉ. अम्बेडकर को संशोधन पेश करने का हक है?

***अध्यक्ष:** श्री नज़ीरुद्दीन अहमद के शब्दों और जो कुछ डॉ. अम्बेडकर ने कहा है उस में कोई अन्तर नहीं है।

***अध्यक्ष:** प्रश्न यह है:

"कि सूची 6 (द्वितीय सप्ताह) के संशोधन संख्या 211 में प्रस्थापित भाग 4 की कंडिका 11 की उपकंडिका 2 की सातवीं पंक्ति में 'shall' शब्द के पश्चात् निम्न शब्द जोड़ दिये जायें:

'in addition to the salaries specified in sub-paragraph 1 of this paragraph.' "

संशोधन स्वीकार किया गया।

***अध्यक्ष:** प्रश्न यह है:

"कि सूची 6 (द्वितीय सप्ताह) के संशोधन संख्या 211 में प्रस्थापित भाग 4 की कंडिका 12 की उपकंडिका (ख) के मद (2) में से 'excluding any time during which the judge is absent on leave' शब्दों को अपमार्जित किया जाये।"

संशोधन अस्वीकार किया गया।

***अध्यक्ष:** प्रश्न यह है:

"कि सूची 1 (द्वितीय सप्ताह) के संशोधन संख्या 10 में प्रस्थापित भाग 4 की कंडिका 10 की–

(1) उपकंडिका (1) में '5000' और '4000' अंकों के स्थान में क्रमश: '3000' और '2000' अंक रखे जायें; और

(2) उपकंडिका (2) में 'without' शब्दों के स्थान में 'on' शब्द रखा जाये।"

***अध्यक्ष:** प्रश्न यह है:

"कि सूची 1 (द्वितीय सप्ताह) के संशोधन संख्या 10 में प्रस्थापित भाग 4 की कंडिका 10 की उपकंडिका (3) को अपमार्जित किया जाये।"

संशोधन अस्वीकार किया गया।

***अध्यक्षः** प्रश्न यह है:

"कि सूची 1 (द्वितीय सप्ताह) के संशोधन संख्या 10 में प्रस्थापित भाग 4 की कंडिका 11 की उपकंडिका (2) को अपमार्जित किया जाये।"

संशोधन अस्वीकार किया गया।

***अध्यक्षः** प्रश्न यह है:

"कि सूची 1 (द्वितीय सप्ताह) के संशोधन संख्या 10 में प्रस्थापित भाग 4 की कंडिका 11 की उपकंडिका (3) में 'Every such judge' शब्दों के स्थान में 'Every judge of a High Court' शब्द रखे जायें।"

संशोधन स्वीकार किया गया।

***अध्यक्षः** प्रश्न यह है:

"कि द्वितीय अनुसूची के भाग 1 के स्थान में यह अनुसूची रखी जाये:–

'PART I

PROVISIONS AS TO THE PRESIDENT AND THE GOVERNORS OF STATES FOR THE TIME BEING SPECIFIED IN PART I OF THE FIRST SCHEDULE—

1. There shall be paid to the President and to the Governors of the States for the time being specified in Part I of the First Schedule the following emoluments *per mensem,* that is to say:—

   The President..... 10,000 rupees.

   The Governor of a State..... 5,500 rupees.

2. There shall also be paid to the President and to the Governors such allowances as were payable respectively to the Governor-General of the Dominion of India and to the Governors of the corresponding Provinces immediately before the commencement of this Constitution.

3. The President and the Governors throughout their respective terms of office shall be entitled to the same privileges to which the Governor-General and the Governors of the corresponding

Provinces were respectively entitled immediatedly before the commencement ot this Constitution.

4. While the Vice-President or any other person is discharging the functions of, or is acting as, President, or any person is discharging the functions of the Governor, he shall be entitled to the same emoluments, allowances and privileges as the President or the Governor whose functions he discharges or for whom he acts, as the case may be.' "

'भाग (1)

राष्ट्रपति तथा प्रथम अनुसूची के भाग (1) में उस समय उल्लिखित राज्यों के राज्यपालों के लिये उपबन्ध–

1. राष्ट्रपति तथा प्रथम अनुसूची के भाग (1) में उल्लिखित राज्यों के राज्यपालों को निम्नलिखित उपलब्धियां प्रति मास दी जायेंगी अर्थात्:–

राष्ट्रपति को..... 10,000 रुपया

राज्य के राज्यपालों को..... 5,500 रुपया

2. राष्ट्रपति तथा राज्यपालों को ऐसे भत्ते भी दिये जायेंगे जैसे कि क्रमश: भारत डोमिनियन के गवर्नर जनरल को तथा तत्स्थानी प्रान्तों के गवर्नरों को इस संविधान के प्रारम्भ से ठीक पहले दिये थे।

3. राष्ट्रपति तथा राज्यपालों को अपनी अपनी सम्पूर्ण पदावधि में ऐसे विशेष अधिकारों का हक होगा जैसे कि इस संविधान के प्रारम्भ से ठीक पहले क्रमश: गवर्नर जनरल तथा तत्स्थानी प्रान्तों के गवर्नरों को था।

4. जबकि उपराष्ट्रपति अथवा कोई अन्य व्यक्ति राष्ट्रपति के कृत्यों का निर्वहन अथवा उसके रूप में कार्य कर रहा है अथवा कोई व्यक्ति राज्यपाल के कृत्यों का निर्वहन कर रहा है तब उसको वैसी ही उपलब्धियों, भत्तों और विशेषाधिकारों का हक होगा जैसा कि यथास्थिति राष्ट्रपति या राज्यपाल को है जिसके कृत्यों का वह निर्वहन करता है अथवा यथास्थिति जिसके रूप में वह कार्य करता है।' "]

संशोधन स्वीकार किया गया।

***अध्यक्ष:** प्रश्न यह है:

"कि भाग 2 के शीर्षक में 'Part I' शब्द और अंक के पश्चात् 'or Part III' शब्द और अंक प्रविष्ट किये जायें।"

संशोधन स्वीकार किया गया।

***अध्यक्षः** प्रश्न यह है:

"कि कंडिका 7 के स्थान में यह कंडिका रखी जाये:–

'7. There shall be paid to the ministers for any State for the time being specified in Part I or Part III of the First Schedule such salaries and allowances as were payable to such ministers for the corresponding Province or the corresponding Indian State, as the case may be, immediately before the commencement of this Constitution.' "

[7. प्रथम अनुसूची के भाग (1) में या भाग (3) में इस समय उल्लिखित प्रत्येक राज्य के मंत्रियों को ऐसे वेतन और भत्ते दिये जायेंगे जैसे कि यथास्थिति तत्स्थानी प्रान्त या तत्स्थानी देशी राज्य के ऐसे मंत्रियों को इस संविधान के प्रारम्भ से ठीक पहले दिये थे।]

संशोधन स्वीकार किया गया।

***अध्यक्षः** प्रश्न यह है:

"कि कंडिका 8 में 'respectively to the Deputy President of the Legislative Assembly and to the Deputy President of the Council of State immediately before the fifteenth day of August 1947 शब्दों के स्थान में 'to the Deputy Speaker of the Constituent Assembly of the Dominion of India immediately before such commencement' शब्द रखे जायें।"

संशोधन स्वीकार किया गया।

***अध्यक्षः** प्रश्न यह है:

"कि द्वितीय अनुसूची के भाग 4 के स्थान में यह भाग रखा जाये:–

'PART IV

PROVISIONS AS TO THE JUDGES OF THE SUPREME COURT AND OF THE HIGH COURTS OF STATES IN PART I OF THE FIRST SCHEDULE.

(1) There shall be paid to the judges of the Supreme Court, in respect of time spent on actual service, salary at the following rates *per mensem,* that is to say:—

The Chief Justice.....	5,000 rupees
Any other Judge.....	4,000 rupees

Provided that if a judge of the Supreme Court at the time of his appointment is in receipt of a pension (other than a disability or wound pension) in respect of any previous service under the Government of India or any of its predecessor Governments or under the Government of State or any of its predecessor Governments, his salary in respect of service in the Supreme Court shall be reduced by the amount of that pension.

(2) Every judge of the Supreme Court shall be entitled without payment of rent to the use of an official residence.

(3) Nothing in sub-paragraph (2) of this paragraph shall apply to a judge who was appointed as a judge of the Federal Court before the thirty-first day of October, 1948, and has become on the date of the commencement of this Constitution a judge of the Supreme Court under clause (1) of article 308 of this Constitution and every such judge shall in addition to the salary specified in sub-paragraph (1) of this paragraph be entitled to receive as special pay an amount equivalent to the difference between the salary so specified and the salary which was payable to him as a judge of the Federal Court immediately before such commencement.

(4) Every judge of the Supreme Court shall receive such reasonable allowances to reimburse him for expenses incurred in travelling on duty within the territory of India and shall be afforded such reasonable facilities in connection with travelling as the President may from time to time prescribe.

(5) The rights in respect of leave of absence (including leave allowances) and pension of the judges of the Supreme Court shall be governed by the provisions which, immediately before the commencement of this Constitution, were applicable to the judges of the Federal Court.

11. (1) There shall be paid to the judges of the High Court of each State for the time being specified in Part I of the First Schedule,

[अध्यक्ष]

in respect of time spent on actual service, salary at the following rates *per mensem,* that is to say:—

The Chief Justice.....	4,000 rupees.
Any other judge.....	3,500 rupees.

(2) Every person who was appointed permanently as a judge of a High Court in any Province before the thirty-first day of October, 1948, and has on the date of the commencemnt of this Constitution become a judge of the High Court in the corresponding State under clause (1) of article 310 of this Constitution, and was immediately before such commencement drawing a salary at a rate higher than that specified in sub-paragraph (1) of this paragraph, shall in addition to the salary specified in sub-paragraph 1 of this paragraph be entitled to receive as special pay an amount equivalent to the difference between the salary so specified and the salary which was payable to him as a judge of the High Court immediately before such commencement.

(3) Every judge of the High Court shall receive such reasonable allowances to reimburse him for expenses incurred in travelling on duty within the territory of India and shall be afforded such reasonable facilities in connection with travelling as the President may from time to time prescribe.

(4) The rights in respect of leave of absence (including leave allowances) and pension of the judges of any such High Court shall be governed by the provisions which, immediately before the commencement of this Constitution, were applicable to the judges of the High Court of the corresponding Province.

12. In this Part, unless the context otherwise requires,—
(a) the expression "Chief Justice includes an acting

Chief Justice, and a "Judge" includes an *ad hoc* judge;

(b) "actual service" includes—

(i) time spent by a judge on duty as a judge or in the performance of such other functions as he may at the request of the President undertake to discharge;

(ii) vacations, excluding any time during which the judge is absent on leave; and

(iii) joining time on transfer from a High Court to the Supreme Court or from the High Court to another.' "

[भाग 4

उच्चतम न्यायालय तथा प्रथम अनुसूची के भाग (1) में के राज्यों के उच्च न्यायालयों के न्यायाधीशों के सम्बन्ध में उपबन्ध।

(1) उच्चतम न्यायालय के न्यायाधीशों को वास्तविक सेवा में बिताये समय के बारे में निम्नलिखित दर से प्रति मास वेतन दिया जायेगा अर्थात्:—

मुख्य न्यायाधिपति..... 5,000 रुपया

कोई अन्य न्यायाधीश..... 4,000 रुपया

परन्तु यदि उच्च न्यायालय के न्यायाधीश को अपनी नियुक्ति के समय भारत सरकार को या उसकी पूर्ववर्ती सरकारों में से किसी की अथवा राज्य की सरकार की अथवा उसकी पूर्ववर्ती सरकारों में से किसी की पहले की गई सेवा के बारे में (निर्योग्यता या क्षतपेन्शन से अतिरिक्त) कोई निवृत्ति-वेतन मिलता हो तो उच्चतम न्यायालय में सेवा के बारे में उसके वेतन में से निवृत्ति वेतन की राशि घटा दी जायेगी।

(2) उच्चतम न्यायालय के प्रत्येक न्यायाधीश को, बिना किराया दिये पदावास के उपयोग का हक होगा।

(3) इस कंडिका की उप कंडिका (2) की कोई बात उस न्यायाधीश को, जो 31 अक्तूबर, 1948 से पूर्व फेडरल न्यायालय के न्यायाधीश के रूप में नियुक्त था और इस संविधान के प्रारम्भ की तारीख को अनुच्छेद 308 के खंड (1) के अधीन उच्चतम न्यायालय का न्यायाधीश हो गया, लागू न होगी, तथा प्रत्येक ऐसे न्यायाधीश को इस कंडिका की उपकंडिका (1) में उल्लिखित वेतन से अतिरिक्त विशेष वेतन के रूप में ऐसी राशि पाने का हक होगा जो कि इस प्रकार उल्लिखित वेतन तथा ऐसे प्रारम्भ से ठीक पहले उसे मिलने वाले वेतन के अन्तर के बराबर है।

[अध्यक्ष]

(4) उच्चतम न्यायालय का प्रत्येक न्यायाधीश भारत राज्य क्षेत्र के भीतर अपने कर्तव्य पालन में की गई यात्रा में किये गये व्ययों की पूर्ति के लिये ऐसे युक्तियुक्त भत्ते पायेगा तथा यात्रा सम्बन्धी उसे ऐसी सुविधायें दी जायेंगी जैसी कि राष्ट्रपति समय समय पर विहित करे।

(5) उच्चतम न्यायालय के न्यायाधीशों की अनुपस्थिति छुट्टी (जिस के अन्तर्गत छुट्टी सम्बन्धी भत्ते भी हैं) तथा निवृत्ति वेतन के बारे में अधिकार उन उपबन्धों से शासित होंगे जो इस संविधान के प्रारम्भ से ठीक पहले फेडरल न्यायालय के न्यायाधीशों को लागू थे।

11. (1) प्रथम अनुसूची के भाग (1) में उस समय उल्लिखित प्रत्येक राज्य में के उच्च न्यायालय के न्यायाधीशों को वास्तविक सेवा में बिताये समय के बारे में निम्नलिखित दर से प्रति मास वेतन दिया जायेगा, अर्थात्:–

मुख्य न्यायाधिपति.....	4,000 रुपये
कोई अन्य न्यायाधीश.....	3,500 रुपये

(2) प्रत्येक व्यक्ति जो 31 अक्तूबर, 1948 से पूर्व किसी प्रान्त में की उच्च न्यायालय के न्यायाधीश के रूप में स्थायी प्रकार से नियुक्त था और इस संविधान के प्रारम्भ की तारीख को अनुच्छेद 310 के खंड (1) के अधीन तत्स्थानी राज्य में की उच्च न्यायालय का न्यायाधीश हो गया और ऐसे प्रारम्भ से ठीक पहले इस कंडिका की उपकंडिका (1) में उल्लिखित वेतन की दर से अधिक दर का वेतन पा रहा था, उसे इस कंडिका की उपकंडिका (1) में उल्लिखित वेतन के अतिरिक्त विशेष वेतन के रूप में ऐसी राशि पाने का हक होगा जो कि इस प्रकार उल्लिखित वेतन तथा ऐसे प्रारम्भ से ठीक पहले उच्चतम न्यायालय के न्यायाधीश के रूप में उसे मिलने वाले वेतन के अन्तर के बराबर है।

(3) उच्च न्यायालय का प्रत्येक न्यायाधीश भारत-राज्य क्षेत्र के भीतर अपने कर्तव्य पालन में की गई यात्रा में किये गये व्ययों की पूर्ति के लिये ऐसे युक्ति युक्त भत्ते पायेगा तथा यात्रा सम्बन्धी उसे ऐसी सुविधायें दी जायेंगी जैसी कि राष्ट्रपति समय-समय पर विहित करे।

(4) ऐसे किसी उच्च न्यायालय के न्यायाधीशों की अनुपस्थिति छुट्टी (जिस के अन्दर छुट्टी भत्ते भी हैं) और निवृत्ति-वेतन के बारे में अधिकार उन उपबन्धों से शासित होंगे जो इस संविधान के प्रारम्भ से ठीक पहले तत्स्थानी प्रान्त के उच्च न्यायालय के न्यायाधीशों को लागू थे।

12. इस भाग में जब तक प्रसंग से अन्यथा अपेक्षित न हो–

(क) "मुख्य न्यायाधिपति" पदावली के अन्तर्गत कार्यकारी मुख्य न्यायाधिपति है तथा "न्यायाधीश" पद के अन्तर्गत तदर्थ न्यायाधीश है।

(ख) "वास्तविक सेवा" के अन्तर्गत है:–

(1) न्यायाधीश के रूप में कर्तव्य करते हुए अथवा ऐसे अन्य कृत्यों के पालन में, जिनका राष्ट्रपति की आकांक्षा पर उस ने निर्वहन करने का भार लिया हो, न्यायाधीश द्वारा व्यतीत समय;

(2) उस समय को न गिनकर जिसमें कि वह न्यायाधीश छुट्टी लेकर अनुपस्थित है, विश्रामावकाश; तथा

(3) उच्च न्यायालय से उच्चतम न्यायालय को अथवा एक उच्च न्यायालय से दूसरे को बदले जाने पर योगकाल।]

संशोधन स्वीकार किया गया।

***अध्यक्ष:** प्रश्न यह है:

"कि संशोधित रूप में द्वितीय अनुच्छेद संविधान का अंग बने।"

प्रस्ताव स्वीकार किया गया।

संशोधित रूप में द्वितीय अनुच्छेद संविधान में प्रविष्ट किया गया।

***श्री एच.वी. कामत:** अध्यक्ष महोदय, क्या आप इस विषय पर कुछ प्रकाश डालेंगे कि यह सत्र कब तक होगा?

***अध्यक्ष:** यह सब आप पर निर्भर है। मेरा आशय विशेष कर आप से नहीं है वरन सभा से है। मैं समझता हूं कि हमें दोपहर बाद फिर समवेत होना है। हम चार बजे सभा की बैठक करेंगे। सभा 4 बजे तक के लिये स्थगित होती है।

***एक माननीय सदस्य:** हम चार बजे से छ: बजे तक बैठक करेंगे।

***अध्यक्ष:** देखा जायेगा।

इस के पश्चात् दोपहर के भोजन के लिये सभा दोपहर बाद चार बजे तक के लिये स्थगित हुई।

सभा, दोपहर के भोजन के बाद चार बजे माननीय डॉ. राजेन्द्र प्रसाद के सभापतित्व में पुनर्समवेत हुई।

संविधान का मसौदा–(जारी)

भाग 6-क

***अध्यक्ष:** अब हम भाग 6-क को लेंगे।

***माननीय डॉ. बी.आर. अम्बेडकर:** श्रीमान, मैं प्रस्ताव पेश करता हूं:

"कि भाग 6 के पश्चात् यह नया भाग प्रविष्ट किया जाये:–

'PART VI-A

THE STATES IN PART III OF THE FIRST SCHEDULE

Application of provisions of Part-VI to States in Part-III of the First Schedule.

211A. The Provisions of Part VI of this Constitution shall apply in relation to the States for the time being specified in Part III of the First Schedule as they apply in relation to the States for the time being specified in Part I of that Schedule subject to the following modifications and omissions, namely:—

(1) For the word "Governor" wherever it occurs in the said Part VI, except where it occurs for the second time in clause (b) of article 209, the word "Rajpramukh" shall be substituted.

(2) In article 128, for the word and figure "Part I" the word and figure "Part III" shall be substituted.

(3) Articles 131, 132 and 134 shall be omitted.

(4) In article 135,—

(a) in clause (1), for the words, "be appointed" the word "becomes" shall be substituted;

(b) for clause (3), the following clause shall be substituted, namely:—

"(3) The Rajpramukh shall be entitled without payment of rent to the use of his residences,

and there shall be paid to the Rajpramukh such allowances as the President may, by general or special order, determine.";

(c) in clause (4), the words 'emoluments and' shall be omitted.

(5) In article 136, after the words "senior-most judge of that court available" the words 'or in such other manner as may be prescribed in this behalf by the President' shall be inserted.

(6) In article 144, the proviso to clause (1) shall be omitted.

(7) In article 148, for clause (1) the following clause shall be substituted, namely:—

"(1) For every State there shall be a Legislature which shall consist of the Rajpramukh and—

(a) in the State of Mysore, two houses;

(b) in other States, one house."

(8) In article 163, for the words "as are specified in the Second Schedule" the words "as the Rajpramukh may determine" shall be substituted.

(9) In article 170, for the words "as were immediately before the date of commencement of this Constitution applicable in the case of members of the Provincial Legislative Assembly for that State" the words "as the Rajpramukh may determine" shall be substituted.

(10) In clause (3) of article 177—

(a) for sub-clause (a), the following sub-clause shall be substituted, namely:—

"(a) the allowances of the Rajpramukh and other expenditure relating to his office as

[माननीय डॉ. बी.आर. अम्बेडकर]

determined by the President by general or special order;"

(b) after sub-clause (e), the following sub-clause shall be inserted, namely:—

"(ee) in the case of the State of Travancore-Cochin, a sum of fifty-one lakhs of rupees required to be paid annually to the Devaswom fund under the covenant entered into before the commencement of this Constitution by the Rulers of the Indian States of Travancore and Cochin for the formation of the United States of Travancore and Cochin;"

(11) In article 183, for clause (2), the following clause shall be substituted, namely:—

"(2) Until rules are made under clause (1) of this article, the rules of procedure and standing orders in force immediately before the commencement of this Constitution with respect to the Legislature for the State or, where no House of the Legislature for the State existed, the rules of procedure and standing orders in force immediately before such commencement with respect to the Legislative Assembly of such Province, as may be specified in this behalf by the Rajpramukh of the State, shall have effect in relation to the Legislature of the State subject to such modifications and adaptations as may be made therein by the Speaker of the Legislative Assembly or the Chairman of the Legislative Council, as the case may be."

(12) In clause (2) of article 191, for the word "Province" the words "Indian State" shall be substituted.

(13) For article 197, the following article shall be substituted, namely:—

197. The judges of each High Court shall be entitled to such salaries and allowances and to such rights in respect of leave of absence and pension as may from time to time be determined by the President after consultation with the Rajpramukh: "Salaries, etc. of Judges

Provided that neither the salary of a judge nor his rights in respect of leave of absence or pension shall be varied to his disadvantage after his appointment.' "

[भाग 6-क

प्रथम अनुसूची के भाग (ख) में के राज्य

211-क. भाग 6 के उपबन्ध प्रथम अनुसूची के भाग 3 में उल्लिखित राज्यों के सम्बन्ध में निम्नलिखित रूपभेदों और लुप्तियों के अधीन रह कर वैसे ही लागू होंगे जैसे कि वे उस अनुसूची के भाग (1) में उल्लिखित राज्यों के सम्बन्ध में लागू होते हैं, अर्थात्– प्रथम अनुसूची के भाग (3) में उल्लिखित राज्यों को भाग 6 के उपबन्धों का लागू होना।

(1) "राज्यपाल" पद के लिये अनुच्छेद 209 के खंड (ख) में जहां वह दूसरी बार आता है वहां को छोड़ कर जहां भी वह उस भाग में आता है "राजप्रमुख" शब्द रख दिया जायेगा।

(2) अनुच्छेद 128 में "भाग (1)" शब्द और अक्षर के लिये "भाग (3)" शब्द और अक्षर रख दिये जायेंगे।

(3) अनुच्छेद 131, 132 और 134 लुप्त कर दिये जायेंगे।

(4) अनुच्छेद 135 में:–

(क) खंड (1) में "नियुक्त होने" शब्दों के लिये "होता है" शब्द रख दिये जायेंगे।

[माननीय डॉ. बी.आर. अम्बेडकर]

(ख) खंड (3) के स्थान में निम्नलिखित खंड रख दिया जायेगा–

"(3) राजप्रमुख को बिना किराया दिये पदावास के उपयोग का हक होगा तथा उसको ऐसे भत्ते दिये जायेंगे जैसे कि राष्ट्रपति साधारण या विशेष आदेश द्वारा निर्धारित करे।"

(ग) खंड (4) में से "और उपलब्धियां" शब्द लुप्त कर दिये जायेंगे।

(5) अनुच्छेद 136 में "न्यायालय का प्राप्य अग्रतम न्यायाधीश" शब्दों के बाद में "अथवा ऐसी अन्य रीति से जैसी कि राष्ट्रपति द्वारा उस बारे में निर्धारित की जाये" शब्द जोड़ दिये जायेंगे।

(6) अनुच्छेद 144 के खंड (1) का परन्तुक लुप्त कर दिया जायेगा।

(7) अनुच्छेद 148 में खंड (1) के स्थान में निम्नलिखित खंड रख दिया जायेगा, अर्थात्:–

"1. प्रत्येक राज्य के लिये एक विधान मंडल होगा जो राजप्रमुख तथा

(क) मैसूर राज्य में दो सदनों से;

(ख) अन्य राज्यों में एक सदन से;

मिल कर बनेगा।"

(8) अनुच्छेद 163 में "जो द्वितीय अनुसूची में उल्लिखित है" शब्दों के स्थान में "जो राजप्रमुख निर्धारित करे" शब्द रख दिये जायेंगे।

(9) अनुच्छेद 170 में "जैसे कि इस संविधान के प्रारम्भ से ठीक पहले तत्स्थानी प्रान्त की विधान-सभा के सदस्यों के विषय में लागू थे" शब्दों के स्थान में "जैसे कि राजप्रमुख निर्धारित करे" शब्द रख दिये जायेंगे।

(10) अनुच्छेद 177 के खंड (3) में:—

(क) उपखंड (क) के स्थान में निम्नलिखित उपखंड रख दिया जायेगा, अर्थात्—

"(क) राजप्रमुख के भत्ते तथा उसके पद सम्बन्धी अन्य व्यय जो राष्ट्रपति साधारण या विशेष आदेश द्वारा निर्धारित करे"

(ख) उपखंड (ड) के पश्चात् निम्नलिखित उपखंड रख दिया जायेगा अर्थात्—

"(डड) तिरुवांकुर-कोचीन राज्य के बारे में 51 लाख की राशि जिसका तिरुवांकुर और कोचीन के देशी राज्यों के शासकों द्वारा तिरुवांकुर और कोचीन संयुक्त राज्य के निर्माण के लिये इस संविधान के प्रारम्भ से पहले की गई प्रसंविदा के अधीन प्रति वर्ष देवस्वम् निधि को दिया जाना अपेक्षित है।"

(11) अनुच्छेद 183 में खंड (2) के स्थान में निम्नलिखित खंड रख दिया जायेगा, अर्थात्–

"(2) जब तक खंड (1) के अधीन नियम नहीं बनाये जाते तब तक इस संविधान के प्रारम्भ से ठीक पहले राज्य के विधान मंडल के सम्बन्ध में जो प्रक्रिया के नियम और स्थायी आदेश प्रवृत्त थे अथवा जहां राज्य में विधान मंडल का कोई सदन न था वहां ऐसे प्रारम्भ से ठीक पहले ऐसे प्रान्त की जिसको कि उस लिये उस राज्य का राजप्रमुख उल्लिखित करे विधान सभा के बारे में जो प्रक्रिया के नियम और स्थायी आदेश प्रवृत्त थे वे ऐसे रूपभेदों और अनुकूसनों के अधीन रह कर जिन्हें यथास्थिति विधान सभा का अध्यक्ष अथवा विधान परिषद् का सभापति करे उस राज्य के विधान-मंडल के सम्बन्ध में प्रभावी होंगे।"

(12) अनुच्छेद 191 के खंड (2) में "प्रान्त" शब्द के स्थान में "देशी राज्य" शब्द रख दिये जायेंगे।

(13) अनुच्छेद 197 के स्थान में निम्नलिखित अनुच्छेद रख दिया जायेगा, अर्थात्–

197. प्रत्येक उच्च न्यायालय के न्यायाधीशों को ऐसे वेतन और भत्तों का तथा अनुपस्थिति छुट्टी के और निवृत्ति वेतनों के सम्बन्ध में ऐसे अधिकारों का जैसे राजप्रमुख से परामर्श के पश्चात् राष्ट्रपति समय-समय पर निर्धारित करे, हक होगा। न्यायाधीशों के वेतन इत्यादि

परन्तु न तो न्यायाधीश के भत्ते और न उसके अनुपस्थिति छुट्टी या निवृत्ति-वेतन विषयक उसके अधिकारों में उसकी नियुक्ति के पश्चात् उसको अलाभकारी कोई परिवर्तन किया जायेगा।

मैं समझता हूं कि और संशोधनों को मैं बाद में पेश करूं।

[डॉ. बी.आर. अम्बेडकर]

यह देखा गया होगा कि इस भाग में यह विचार निहित है कि संविधान का भाग 6 जिसका संबंध राज्यों के संविधान से है वह भाग 3 में के राज्यों पर अनुच्छेद 211-क के उपबन्धों के अधीन अब अपने आप लागू होगा। पर यह अनुभव किया गया कि उन देशी राज्यों पर भाग 6 को लागू करने में, जो भाग 3 में होंगे, कुछ ऐसी विशेष परिस्थितियां हैं जिनके लिये कोई उपबन्ध रखना आवश्यक है और इस विशेष संशोधन 217 का प्रयोजन यह है कि उन विशिष्ट अनुच्छेदों की ओर संकेत किया जाये जिनमें भाग 3 में के राज्यों की विशेष परिस्थितियों पर विचार करने के लिये इन संशोधनों का करना आवश्यक है। अन्यथा भाग 3 में के राज्य जहां तक उनके आन्तरिक संविधान का संबंध है भाग 1 में के राज्यों के समान होंगे।

***अध्यक्ष:** क्या हम संशोधनों को लें?

***श्री के.एम. मुन्शी** (बम्बई: जनरल): क्या मैं इसके विवरण को पढ़ूं.....

***अध्यक्ष:** संशोधनों के पेश हो जाने के बाद। श्री नज़ीरुद्दीन अहमद।

***श्री नज़ीरुद्दीन अहमद:** अध्यक्ष महोदय, मैं संशोधन संख्या 237 और 238 पेश करूंगा, परन्तु इस संविधान के कलेवर में एक आनुषंगिक संशोधन आवश्यक है और उसका सुझाव मैंने संशोधन संख्या 254 में दिया है। मैं प्रस्ताव पेश करता हूं:

"कि सूची 7 (द्वितीय सप्ताह) के संशोधन संख्या 217 में प्रस्थापित नये अनुच्छेद 211-क में 'modification' शब्द के स्थान में 'adaptation, modification' शब्द रखे जायें।"

मैं यह प्रस्ताव भी पेश करता हूं:

"कि सूची 7 (द्वितीय सप्ताह) के संशोधन संख्या 217 में—

(1) प्रस्थापित अनुच्छेद 211-क के मद (3) में 'shall be omitted' शब्दों के स्थान में 'shall not apply to this part' शब्द रखे जायें;

(2) प्रस्थापित अनुच्छेद 211-क के मद (4) की कंडिका (क) में 'in clause (1)' शब्दों के पश्चात् 'for the time being specified in First Schedule' शब्दों को अपमार्जित किया जाये।"

संशोधन 238 के भाग 2 की स्वीकृति पर आनुषंगिक संशोधन के रूप में मैं संशोधन संख्या 254 को भी पेश करता हूं। मैं प्रस्ताव पेश करता हूं:

"कि अनुच्छेद 135 के खंड (1) में से 'for the time being specified in the First Schedule' शब्दों को अपमार्जित किया जाये।"

श्रीमान, अनुच्छेद 211-क की योजना के सम्बन्ध में मैं यह निवेदन करता हूं कि मसौदा समिति ने एक प्रकार के कम समय लगने वाले मार्ग की शरण ली है। उसने केवल प्रान्तों पर लागू होने वाले अनुच्छेदों को इस प्रकार अनुकूलित किया है कि वे देशी राज्यों के प्रयोजनों के लिये ठीक हो जायें। इस रीति के अतिरिक्त नये रूप में इन अनुच्छेदों को फिर से लिखना चाहिये था। ऐसे बहुत से उपबन्ध हैं जो प्रान्तों और केन्द्रों के लिये समान हैं। यदि अनुकूलन की रीति का इस प्रकार पालन किया जाता तो कई प्रान्त संबंधी अनुच्छेद इस प्रकार की एक ही धारा द्वारा अनुकूलित हो सकते थे। इस रीति में कई असमानताओं की उपेक्षा हो जाने का भय है और यह करना कठिन हो जाता है कि अनुकूलन के बाद क्या असमानतायें रह जाती हैं। मैं निवेदन करता हूं कि यदि हो सके तो अनुकूलित रूप में इन अनुच्छेदों को एक भिन्न भाग में फिर से लिखा जाये। मैं आशा करता हूं कि मसौदा समिति इस सुझाव पर विचार करेगी।

मेरा पहला संशोधन अनुच्छेद 211-क के कलेवर के संबंध में है। उसमें कहा गया है कि प्रथम अनुसूची का भाग 3 अर्थात् भाग 6 के उपबंध इन "रूपभेदों और लुप्तियों" के अधीन स्वीकार किये जायेंगे। मैं यह चाहता हूं कि वह "अनुकूलनों, रूपभेदों और लुप्तियों" इस प्रकार से हो। "अनुकूलन" शब्द मुझे बहुत ही उपयुक्त प्रतीत होता है। हम यह कर रहे हैं कि प्रान्तों पर लागू होने वाले उपबंधों को देशी राज्यों के लिये उपयुक्त बनाकर उनका अनुकूलन करें। अतः ये वास्तव में रूपभेद तथा लुप्तियां ही नहीं हैं वरन् यथार्थ में तथा मुख्यतया वे अनुकूलन हैं। इसी कारण इस प्रसंग में "अनुकूलन" शब्द विशेषकर उपयुक्त है और इसे स्वीकार कर लेना चाहिये।

इसके बाद श्रीमान, इसके बाद का संशोधन भी मसौदा संबंधी है। मैं केवल उसका संकेत करूंगा और उसके विषय पर विचार करना मसौदा समिति पर छोड़ दूंगा। वह पद 3 के सम्बन्ध में है। उसमें यह कहा गया है कि "131, 132 और 134 अनुच्छेदों" को छोड़ दिया जाये। उसके स्थान में यह कहना अधिक अच्छा होगा कि "ये अनुच्छेद इस भाग को लागू नहीं होंगे।" कहने का तात्पर्य यह है कि अनुच्छेद 131, 132 और 134 भाग 6 को लागू नहीं होंगे जिस पर विचार हो रहा है। यह मसौदा सम्बन्धी है और इस पर विचार करना मैं मसौदा समिति पर छोड़ दूंगा।

मेरे विचार से इससे अगला संशोधन महत्वपूर्ण है। वह अनुच्छेद 131 के खंड (1) के अनुकूलन के संबंध का है। उसमें, मेरा आशय मूल अनुच्छेद से है, यह कहा गया है कि राज्यपाल संसद के किसी भी सदन का या उस समय प्रथम अनुसूची में उल्लिखित किसी राज्य के विधान मंडल के सदन का सदस्य नहीं होगा। हम इसे राज्य प्रमुखों को लागू करने के लिये अनुकूलित करना चाहते हैं। इस प्रकार अनुकूलित रूप में वह इस प्रकार पढ़ा जायेगा कि राजप्रमुख संसद के किसी सदन का या उस समय प्रथम अनुसूची में उल्लिखित किसी राज्य के विधान-मंडल के सदन का सदस्य होगा। मैं निवेदन करता हूं कि जिस समय इस साल अनुच्छेद का मसौदा तैयार किया गया था देशी राज्यों का चित्र कदाचित

[श्री नज़ीरुद्दीन अहमद]

अस्पष्ट सा था और इस कारण हमने प्रान्तों के लिये प्रयोज्य पदावली को ध्यान में रखा जो इस प्रकार थी "उस समय प्रथम अनुसूची में उल्लिखित राज्य।" मैं यह निवेदन करता हूं कि राजप्रमुख न केवल संसद के किसी सदन के या उस समय प्रथम अनुसूची में उल्लिखित राज्यों के ही सदस्य न होने चाहिये वरन् उस समय तृतीय अनुसूची में उल्लिखित किसी राज्य के भी सदस्य नहीं होने चाहिये। मेरे कहने का अभिप्राय यह है कि कार्यप्रणाली इस प्रकार की होनी चाहिये कि....

***माननीय श्री के. सन्तानम्** (मद्रास: जनरल): माननीय सदस्य प्रथम अनुसूची के भाग 1 और प्रथम अनुसूची में गड़बड़ कर रहे हैं। प्रथम अनुसूची के अन्तर्गत सब राज्य आ जाते हैं।

***अध्यक्ष:** प्रथम अनुसूची में उल्लिखित न कि उस अनुसूची के भाग 1 में।

***श्री नज़ीरुद्दीन अहमद:** इस बात को बताने के प्रति मैं श्री सन्तानम् का कृतज्ञ हूं। उस दशा में यह संशोधन और संशोधन संख्या 254 भी अनावश्यक हो जायेंगे।

श्रीमान, ये अनुच्छेद एक बहुत बड़ी संख्या में प्रति दिन प्रात:काल मिलते हैं और उसी दिन हमें इन पर विचार करना पड़ता है। अन्य संशोधनों पर मसौदा समिति द्वारा विचार कर लिया जायेगा।

(सूची 8 द्वितीय सप्ताह का संशोधन संख्या 239 पेश नहीं किया गया।)

***अध्यक्ष:** संशोधन संख्या 240, श्री सिधवा।

***श्री आर.के. सिधवा:** श्रीमान, मैं प्रस्ताव पेश करता हूं:

"कि सूची 7 (द्वितीय सप्ताह) के संशोधन संख्या 217 में प्रस्थापित अनुच्छेद 211-क के मद (4) की कंडिका (ख) में प्रस्थापित खंड (3) के अन्त में 'and such allowances shall be a charge on the revenue of the State' शब्द जोड़ दिये जायें।"

एक इसी प्रकार का संशोधन संख्या 241 है।

श्रीमान, मैं प्रस्ताव पेश करता हूं:

"कि सूची 7 (द्वितीय सप्ताह) के संशोधन संख्या 217 में प्रस्थापित अनुच्छेद 211-क के मद (10) की कंडिका (क) में प्रस्थापित उपखंड (क) के अन्त

में 'and such expenditure shall be a charge on the revenues of the State' शब्द जोड़ दिये जायें।"

***माननीय श्री के. सन्तानम्:** कंडिका (10) पारित करने वाली धारा है। यदि आप उसे अनुच्छेद 177 से मिलाकर पढ़ें तो यह देखा जायेगा कि ये भत्ते एक भार के रूप में होंगे और यही श्री सिधवा चाहते हैं।

***श्री आर.के. सिधवा:** मेरा विचार यह है कि संघ पर इसका भार नहीं होना चाहिये, मैं यह जानना चाहता हूं कि भत्तों का भार संघ पर होगा या राज्य पर। यदि उसका भार राज्य पर होता है तो मेरा संशोधन आवश्यक नहीं है।

***माननीय श्री के. सन्तानम्:** अनुच्छेद 177 राजप्रमुखों का निर्देश करता है।

***श्री के.एम. मुंशी:** वह केवल राज्यों पर भारणीय है।

***अध्यक्ष:** यदि आप कंडिका (1) की ओर निर्देश करते हैं तो यह उसके अन्तर्गत आ जाता है। उसमें कहा गया है–

"अनुच्छेद 177 के खंड (3) में उपखंड (क) के स्थान में यह उपखंड रख दिया जाये–

'(a) the allowances of the Rajpramukh and other expenditure relating to his office as determined by the President by general or special order' "

[(क) राजप्रमुख के भत्ते और उसके पद संबंधी अन्य व्यय जिसे राष्ट्रपति साधारण या विशेष आदेश द्वारा निर्धारित करे।]

***श्री आर.के. सिधवा:** इससे यह आभास नहीं मिलता है कि वह राज्य पर भारणीय होगा।

***माननीय श्री के. सन्तानम्:** पूरा का पूरा अनुच्छेद 177 उसके संबंध का है।

***श्री आर.के. सिधवा:** यदि अब यह स्पष्ट हो गया तो मुझे कोई आपत्ति नहीं है। मैं यही चाहता था कि वह राज्य पर भारणीय हो।

***अध्यक्ष:** अनुच्छेद 177 खंड (3) के अन्तर्गत यह बात आ जाती है।

***माननीय डॉ. बी.आर. अम्बेडकर:** मेरे संशोधन संख्या 10 के अन्तर्गत यह बात आ जाती है।

***श्री आर.के. सिधवा:** अब मैं समझा। तो फिर नये अनुच्छेद 235-क से संबंधित एक और संशोधन है। क्या वह बाद में लिया जायेगा?

***अध्यक्ष:** जी हां, अब हम श्री ब्रजेश्वर प्रसाद के संशोधन संख्या 242 को लेते हैं।

***श्री ब्रजेश्वर प्रसाद:** श्रीमान, मैं प्रस्ताव पेश करता हूं:

"कि सूची 7 (द्वितीय सप्ताह) के संशोधन संख्या 217 में प्रस्थापित अनुच्छेद 211-क के मद (13 में 'after consultation with the Rajpramukh' शब्दों) को अनुच्छेद 197 में से अपमार्जित किया जाये।"

श्रीमान, राष्ट्रपति द्वारा राजप्रमुख से परामर्श करने के लिखित कानूनी आभार का मैं विरोधी हूं। मैं यह जानता हूं कि व्यवहार में, राष्ट्रपति सदैव राजप्रमुख से परामर्श करेगा। परन्तु यदि कोई लिखित कानूनी आभार रखा जाता है तो अध्यक्ष की कार्यवाही का क्षेत्र परिसीमित हो जायेगा। कोई व्यक्ति सरलता से राजप्रमुख की मंत्रणा का विरोध नहीं कर सकेगा। इस कारण श्रीमान, मैं इस प्रस्थापना के पक्ष में हूं कि इस क्षेत्र में राष्ट्रपति का प्राधिकार अनिर्बन्धित तथा बिना किसी प्रतिरोध के होना चाहिये। श्रीमान, राजप्रमुख के विरोध में मैं क्यों हूं इसका एक और भी कारण है। मैं यह चाहता हूं कि जहां तक हो सके सब शक्तियां राष्ट्रपति को सौंपी जायें जिसका अर्थ यह होगा कि भारत सरकार के हाथों में। मूलत: फेडरल वाद और प्रान्तीय स्वायत्तता के विरोध में होने के कारण और एकात्मक राज्य के पक्ष में होने के कारण मैं यह समझता हूं कि जहां तक इस विषय का संबंध है शक्तियां केवल राष्ट्रपति को सौंपी जायें।

***अध्यक्ष:** दो और संशोधन हैं जिनमें से एक की सूचना काका भगवन्त राय ने दी है।

***काका भगवन्त राय** (पटियाला तथा पूर्वी पंजाब राज्यों का संघ): अध्यक्ष महोदय, मैं प्रस्ताव पेश करता हूं:

"कि सूची 7 (द्वितीय सप्ताह) के संशोधन संख्या 217 में प्रस्थापित अनुच्छेद 211-क की कंडिका (ख) के मत (4) के स्थान में यह मद रखा जाये:-

'(ख) खंड (3) के स्थान में यह खंड रखा जाये; अर्थात्-

(3) The Rajpramukh shall be entitled, without payment of rent to the use of his residences, and there shall be paid to the Rajpramukh such allowances as the President may, on consideration of the recommendation made by the Legislature of the State, by general or special order, determine.' "

[राजप्रमुख को बिना किराया दिये अपने निवासस्थानों के प्रयोग करने का हक होगा और राजप्रमुख को ऐसे भत्ते दिये जायेंगे जैसे राष्ट्रपति उस राज्य के विधान मंडल द्वारा की गई सिफारिश पर विचार कर साधारण या विशेष आदेश द्वारा निर्धारित करे।]

श्रीमान, राजप्रमुखों के बड़े-बड़े भत्ते राज्य के राजस्व पर प्रत्यक्ष रूप में एक भार हैं और राज्य का राजस्व राज्य की जनता द्वारा दिया जाता है। अतः जनता के प्रतिनिधियों को—मेरा अभिप्राय राज्य के विधान-मंडलों से है—उन भत्तों पर वाद विवाद करने का हक होगा जो राजप्रमुखों को दिया जायेगा। श्रीमान, आपको यह याद होगा कि जब हम अनुसूची 7 पर वाद विवाद कर रहे थे मैंने एक इसी प्रकार का संशोधन रखा था और मुझे डॉ. अम्बेडकर द्वारा यह आश्वासन दिया गया था कि जब हम राज्य के अध्याय को उठायेंगे हम इस पर अवश्य विचार करेंगे। मैं समझता हूं कि डॉ. अम्बेडकर इस संशोधन पर विचार करने और उसे स्वीकार करने की कृपा करेंगे।

***प्रो. शिब्बन लाल सक्सेनाः** अध्यक्ष महोदय, श्रीमान, मैं प्रस्ताव पेश करता हूं:

"कि सूची 7 (द्वितीय सप्ताह) के संशोधन संख्या 217 में प्रस्थापित अनुच्छेद 211-क के मद (10) की कंडिका (क) में 'The President by general or special order' शब्दों के स्थान में 'Parliament by law' शब्द रखे जायें।"

***अध्यक्षः** जो प्रति मेरे पास है वह इस प्रकार है:

"कि सूची 10 (द्वितीय सप्ताह) के संशोधन संख्या 278 में प्रस्थापित अनुच्छेद 197 के खंड (1) में 'President after consultation with the Rajpramukh' शब्दों के स्थान में 'Parliament by law' शब्द रखे जायें।"

***प्रो. शिब्बन लाल सक्सेनाः** जिस संशोधन को मैं पेश कर रहा हूं वह सूची 12 का संशोधन 288 है।

***अध्यक्षः** यह मुझे अभी मिला है। आप उसे पेश कर सकते हैं।

***श्री टी.टी. कृष्णमाचारीः** पर वह पेश नहीं किया गया है।

***माननीय डॉ. बी.आर. अम्बेडकरः** आप उसे कैसे पेश कर सकते हैं?

***प्रो. शिब्बन लाल सक्सेनाः** मैं उस संशोधन को पेश नहीं कर रहा हूं जिसे अध्यक्ष ने पढ़ा था। मैं सूची 12 के संशोधन संख्या 298 को पेश कर रहा हूं।

***माननीय श्री के. सन्तानम्:** इसके पूर्व सूची 10 में के संशोधन संख्या 276, 277 और 278 हैं।

***अध्यक्ष:** हम अभी उन पर नहीं आ पाये हैं। प्रो. शिब्बन लाल सक्सेना इस संशोधन को पेश करें और उसके बाद इन संशोधनों को लेंगे।

***प्रो. शिब्बन लाल सक्सेना:** यहां हम राजप्रमुखों को दिये जाने वाले भत्तों के लिये उपबन्ध बना रहे हैं और हम यह कह चुके हैं कि इन भत्तों को राष्ट्रपति साधारण या विशेष आदेश द्वारा निर्धारित करेगा। मूल अनुच्छेद में राज्यपालों का वेतन संसद द्वारा निर्धारित किया जायेगा और मैं यह नहीं समझ पाता हूं कि राजप्रमुख के भत्ते संसद द्वारा निर्धारित क्यों न किये जायें। वास्तव में भत्तों को सदैव के लिये नियत कर देना चाहिये और उनमें परिवर्तन नहीं होना चाहिये। इस कारण मैं समझता हूं कि इन भत्तों का निर्धारण संसद द्वारा होना चाहिये न कि राष्ट्रपति द्वारा। हर एक राष्ट्रपति के बदलने पर इनमें परिवर्तन नहीं होना चाहिये। मेरा संशोधन संख्या 288 यह है।

***माननीय श्री के. सन्तानम्:** अध्यक्ष महोदय, मैं प्रस्ताव पेश करता हूं:

"कि सूची 7 (द्वितीय सप्ताह) के संशोधन संख्या 217 में प्रस्थापित अनुच्छेद 211-क के मद (4) में उप-कंडिका (ख) के स्थान में निम्नलिखित उप-कंडिका रखी जाये:-

'(ख) खंड (3) के स्थान में निम्नलिखित खंड रखा जायेगा, अर्थात्-

(3) Unless he has his own residence in the Capital of his State, the Rajpramukh shall be entitled to the use of an official residence without payment of rent, and there shall be paid to the Rajpramukh such allowances as the President may, by general or special order, determine.' "

[(3) यदि उसके राज्य की राजधानी में उसका निजी निवासस्थान नहीं है तो राज प्रमुख को बिना किराया दिये पदावास के प्रयोग करने का हक होगा, तथा राजप्रमुख को ऐसे भत्ते दिये जायेंगे जैसे राष्ट्रपति साधारण या विशेष आदेश द्वारा निर्धारित करे।]

इस संशोधन का विषय यह है कि जिस रूप में इस खंड का मूलत: मसौदा तैयार किया गया था उसमें उपबन्ध यह है कि अपने निवासस्थानों को बिना किराया दिये प्रयोग में लाने का उसे हक होगा; यदि उसके अपने निवासस्थान हैं तो यह निश्चित है कि हमें एक ऐसा संविधानिक उपबंध नहीं बनाना चाहिये कि उनके प्रयोग करने का उसे हक है। किराया देने का प्रश्न केवल तभी उठता है जब कि उसे किसी ऐसे निवासस्थान का प्रयोग करना पड़े जो अधिकार द्वारा उसका नहीं है। इसी कारण मैं यह उपबन्ध बनाना चाहता हूं कि राजप्रमुख को केवल तभी बिना किराया दिये सरकारी पदावास के प्रयोग करने का हक होगा जब कि

उसकी राजधानी में उसका अपना निवासस्थान न हो और इसी के अनुसार यह मेरा संशोधन प्रस्तुत किया गया है। श्रीमान, मैं इस संशोधन को पेश करता हूं:

"कि सूची 7 (द्वितीय सप्ताह) के संशोधन संख्या 217 में प्रस्थापित अनुच्छेद 211-क के मद (13) में अनुच्छेद 197 के स्थान में निम्नलिखित अनुच्छेद रखा जाये:-

197. (1) There shall be paid to the judges of each High Court such salaries as may be determined by the President after consultation with the Rajpramukh. Salaries. etc. of judges.

(2) Every judge shall be entitled to such allowances and to such rights in respect of leave of absence and pension as may from time to time be determined by or under law made by Parliament and, until so determined, to such allowances and rights as may be determined by the President in consultation with the Rajpramukh:

Provided that neither the allowances of a judge nor his rights in respect of leave of absence or pension shall be varied to his disadvantage after his appointment.' "

197. (1) प्रत्येक उच्च न्यायालय के न्यायाधीश को ऐसे वेतन दिये जाये जायेंगे जैसे राजप्रमुख से परामर्श के पश्चात् राष्ट्रपति निर्धारित करे। न्यायाधीशों के वेतन इत्यादि

(2) प्रत्येक न्यायाधीश को ऐसे भत्तों का तथा अनुपस्थिति-छुट्टी और निवृत्ति-वेतनों के संबंध में ऐसे अधिकारों का हक होगा जैसे संसद द्वारा निर्मित विधि के द्वारा या अधीन समय-समय पर निर्धारित किये जायें और जब तक इस प्रकार से निर्धारित न किये जायें तब तक ऐसे भत्तों का और अधिकारों का हक होगा जैसे राजप्रमुख के परामर्श से राष्ट्रपति निर्धारित करे:

परन्तु न तो न्यायाधीश के भत्ते और न उसके अनुपस्थिति-छुट्टी या निवृत्ति-वेतन विषयक उसके अधकारों में उसकी नियुक्ति के पश्चात् उसको अलाभकारी कोई परिवर्तन किया जायेगा।"]

श्रीमान, हमारा प्रयत्न यह रहा है कि जहां तक हो सके राज्यों को प्रान्तों की पंक्ति में लाया जाये। जहां तक वेतनों का सम्बन्ध है यह आवश्यक समझा गया कि देशी राज्यों में के उच्च न्यायालयों के न्यायाधीशों के वेतन कम से कम इस

[माननीय श्री के. सन्तानम्]

समय तो प्रान्तों में के उच्च न्यायालयों के वेतनों से भिन्न होने चाहिये। इसी कारण राष्ट्रपति को अनुच्छेद 197 (1) के अधीन अधिकार दिया गया है। अन्य भत्तों और अनुपस्थिति-छुट्टी तथा निवृत्ति-वेतनों के संबंध के अधिकारों को नियत करने की शक्ति संसद को दे दी गई है। यह न्यायपूर्ण नहीं है कि संसद या संसदीय विधान राज्यों के उच्च न्यायालयों को भी क्योंकर लागू न हो। अतः जहां तक खंड (2) और परन्तुक का संबंध है मैंने उसी भाषा को अपनाया है जो अनुच्छेद 197 में है। अन्तर यह है कि आरम्भ में भत्ते राष्ट्रपति द्वारा नियत किये जायें खंड (1) में मैंने राष्ट्रपति को न्यायाधीशों के वेतन नियत करने का अधिकार दे दिया है जिससे कि नया अनुच्छेद 197 पुराने अनुच्छेद 197 के उतना सन्निकट रहेगा जितना सन्निकट रखना संभाव्य तथा आवश्यक है।

***श्री एच.वी. कामतः** एक स्पष्टीकरण संबंधी प्रश्न है, मैं अपने माननीय मित्र श्री सन्तानम् से यह पूछ सकता हूं कि इस तथ्य को ध्यान में रखते हुए राजप्रमुखों को अपने पदावास का किराया देने से एक विशिष्ट रूप में मुक्त किया गया है क्या राज्यपालों के संबंध के अनुच्छेद का भी उपयुक्त रूप में संशोधन किया जायेगा? वह अनुच्छेद उन्हें विशिष्ट रूप में मुक्त नहीं करता है।

***अध्यक्षः** इस समय यह प्रश्न नहीं उठता है।

***श्री एच.वी. कामतः** राज्यपाल और राजप्रमुख परस्पर समान हैं।

***अध्यक्षः** होंगे, पर यहां हम राज्यपालों के संबंध में विचार नहीं कर रहे हैं।

***माननीय श्री के. सन्तानम्ः** मैं यह और कहूंगा कि सामान्यतया राजप्रमुखों के राजधानी में अपने निजी निवासगृह हैं और इस कारण किराये का प्रश्न ही नहीं उठेगा।

***श्री ए. थानू पिल्ले** (तिरुवांकुर और कोचीन संघ): क्या मैं अपने माननीय मित्र श्री सन्तानम् से यह जान सकता हूं कि उच्च न्यायालय के न्यायाधीशों के वेतन और भत्तों में वे अन्तर क्यों करते हैं?

***माननीय श्री के. सन्तानम्ः** क्योंकि अनुच्छेद 197 ने अन्तर कर दिया है। उसके द्वारा अनुसूची 2 में वेतन नियत हो चुके हैं और संसद् द्वारा वे अपरिवर्त्तनीय बना दिये जा चुके हैं। परन्तु अनुच्छेद 197 के खंड (2) के द्वारा भत्ते को और छुट्टी तथा निवृत्ति-वेतन इत्यादि के संबंध के अन्य अधिकारों को संसदीय विधान के अधीन कर दिया है। चूंकि अनुच्छेद 197 के द्वारा अन्तर कर दिया गया है, राज्यों के संबंध में मैं उसी अन्तर को बनाये रखने का प्रयत्न कर रहा हूं।

***श्री एच.आर. गुरुव रेड्डी** (मैसूर राज्य): अध्यक्ष महोदय, मैं प्रस्ताव पेश करता हूं:

> "कि सूची 7 (द्वितीय सप्ताह) के संशोधन संख्या 217 में प्रस्थापित अनुच्छेद 211-क के मद (1) में 'Rajpramukh' शब्द के स्थान में 'Maharaja, Nizam, or Rajpramukh' शब्द रखे जायें।"

श्रीमान, यह कहा जा सकता है कि इस विषय की व्याख्या संविधान में अन्यत्र कर दी जायेगी। पर मैं यह समझता हूं कि यह आवश्यक है...।

***श्री टी.टी. कृष्णमाचारी** (मद्रास: जनरल): क्या मैं यह बता सकता हूं कि मसौदा समिति का यह विचार है कि इस परिभाषा को खंड 303 की परिभाषा में जोड़ दिया जाये जिसमें हम संशोधन करना चाहते हैं और यदि माननीय सदस्य प्रतीक्षा करें तो कदाचित् उन्हें जैसे वे चाहते हैं वैसे इन शब्दों को हमारी प्रस्थापना पर संशोधन के रूप में रखने का अवसर मिलेगा।

***श्री एच.आर. गुरुव रेड्डी:** इस दशा में मैं इसे स्थगित रखूंगा। मैं संशोधन संख्या 287 पेश करूंगा। मैं प्रस्ताव पेश करता हूं:

"कि सूची 7 (द्वितीय सप्ताह) के संशोधन संख्या 217 में प्रस्थापित अनुच्छेद 211क के मद (4) की उपकंडिका (ख) में के प्रस्थापित खंड (3) में 'Payments of rent' शब्दों के स्थान में 'any obligation' शब्द रख दिये जायें।"

"किराये" शब्द के प्रयोग से ऐसा प्रतीत होता है कि मानो राज्य के शासकों को तुच्छ बनाया जा रहा है। इस कारण मैं यह सुझाव देता हूं कि "आभार" शब्द रखा जाये। मुझे और कुछ नहीं कहना है।

***प्रो. शिब्बन लाल सक्सेना:** अध्यक्ष महोदय, मैं प्रस्ताव पेश करता हूं:

"कि सूची 10 (द्वितीय सप्ताह) के संशोधन संख्या 273 मैं प्रस्थापित अनुच्छेद 197 के खंड (1) में "President after consultation with the Rajpramukh" शब्दों के स्थान में "Paliament by law" शब्द रखे जायें।"

संशोधन संख्या 278 मेरे मित्र श्री सन्तानम् द्वारा पेश किया गया था। इस संशोधन को पेश करने में मेरा उद्देश्य यह है। तिरुवांकुर के मेरे माननीय मित्र ने यह प्रश्न पहले ही उठा दिया था जिसका श्री सन्तानम् ने उत्तर भी दे दिया था। उन्होंने कहा था कि संशोधनों की सूची 7 को जो इस समय विचाराधीन है अनुच्छेद 207 के अनुरूप बनाने का वे प्रयत्न कर रहे हैं। मैं यह समझता हूं कि वेतन नियत कर देने चाहिये। परिवर्तनशील नहीं होने चाहिये और यह नहीं होना चाहिये कि समय-समय पर राजप्रमुख के परामर्श के पश्चात् राष्ट्रपति उनको नियत करे। वेतन चाहे जो कुछ भी हो, उचित केवल यही है कि उन्हें संसद ही नियत करे। अन्तिम प्राधिकार संसद का ही होना चाहिये। यह मानने के लिए मैं तैयार हूं कि इस संक्रांति काल में आप इस खंड को रख सकते हैं, परन्तु यदि आप उसे संविधान में स्थायी रूप से रखना चाहते हैं तो यह वेतन संसद विधि द्वारा निश्चित करे।

***श्री राज बहादुर** (मत्स्य संयुक्त राज्य): श्री के. सन्तानम् द्वारा दिये गये वक्तव्य को ध्यान में रखते हुए, मैं संशोधन संख्या 277 को पेश नहीं करता हूं।

***अध्यक्ष:** संशोधन इतने ही हैं। इस अनुच्छेद पर तथा संशोधनों पर अब वाद-विवाद हो सकता है।

***माननीय सरदार वल्लभभाई जे. पटेल** (बम्बई: जनरल): श्रीमान मैंने एक भाषण तैयार किया है जिसके बारे में मैंने सोचा है कि चूंकि उसके पढ़ने से मुझ पर जोर पड़ेगा इसलिये मैं उसे पढ़ नहीं सकूंगा और मैंने अपनी ओर से उसे पढ़ने के लिये श्री मुंशी से निवेदन किया है। इस भाषण में उन संशोधनों के विकास का साधारण सार है जिनको डॉ. अम्बेडकर ने पेश किया है। ऐसे बहुत से संशोधन हैं जिनके बारे में यह बताना आवश्यक है कि वे कैसे पुर:स्थापित किये गये। इन बातों के पीछे जो सामान्य विचार है उसका बताना भी आवश्यक है। अत: यदि आप अनुमति दें तो उसे पढ़ने के लिये मैं श्री मुंशी से निवेदन करूं।

***अध्यक्ष:** जी हां, श्री मुंशी उसे पढ़ सकते हैं।

***माननीय सरदार वल्लभभाई जे. पटेल:** †श्रीमान, मेरा यह प्रयत्न रहा है कि राज्यों के संबंध में अपनी रीति और प्रगति के बारे में मैं इस सभा को पूर्णतया परिचित रखूं। समय-समय पर इस सभा में मैंने जो वक्तव्य दिये हैं उनके अतिरिक्त गत जुलाई में मैंने इस सभा के समक्ष एक श्वेत पत्र प्रस्तुत किया था जिसमें राज्यों के प्रति भारत सरकार द्वारा बरती गई नीति का ही विवरण न था, वरन् शासकों से किये गये भिन्न-भिन्न करार और प्रसंविदाओं की प्रतिलिपियां भी हैं। गत मार्च में सभा के समक्ष मैंने एक और विवरणपूर्ण प्रतिवेदन राज्यों के मंत्रालय की नीति और क्रियाकरण के विषय पर प्रस्तुत किया था। अब राज्यों के एकीकरण का कार्य समाप्त हो गया है, आगामी माह में इस सभा के समक्ष मैं एक और राज्य पत्र प्रस्तुत करना चाहता हूं जिसमें उन सब प्रगतियों का व्यापक पुनर्विलोकन होगा जो देशी राज्यों में उस समय से हुई हैं जिस समय से भारत सरकार को राज्यों की समस्या का सामना करने के लिये आमंत्रित किया गया था।

राज्यों में प्रयोज्य संविधान के उपबन्धों के संबंध में जो संशोधन इस समय प्रस्थापित किये गये हैं उनमें उस रक्तहीन क्रांति के परिणाम निहित हैं जिसने इतने सूक्ष्म काल में राज्यों की आन्तरिक तथा बाह्य व्यवस्था में परिवर्तन कर दिया है। यह तथ्य कि नये संविधान की अनुसूची (1) के भाग 3 में केवल नौ राज्यों का उल्लेख है। भारत सरकार द्वारा बरती गई एकीकरण की नीति से हुई प्रत्यक्ष उन्नति का चिन्ह है। 501 राज्यों को बड़े-बड़े एककों में मिला कर और शताब्दियों पुराने स्वैरतंभों को पूर्णतया मिटाकर भारतीय लोकतंत्र ने एक महान विजय प्राप्त की है जिसका शासकों तथा भारत की जनता को समान रूप से गौरव होना चाहिये। यह एक ऐसी सफलता है जो इतिहास के किसी भी अंग में राष्ट्र या जनता के श्रेय का अन्तिम महत्वपूर्ण परिणाम है।

जैसा कि इस सभा को विदित है जब राज्य भारत की संविधान सभा में प्रविष्ट हुए तो यह समझा गया था कि राज्यों का संविधान भारत के संविधान का अंग नहीं होगा। यह भी समझा गया था कि प्रांतों की तरह भारतीय संघ में राज्यों का प्रवेश अपने आप नहीं होगा वरन् संविधान के अनुसमर्थन की किसी रीति द्वारा

---

†यह भाषण श्री के.एम. मुंशी द्वारा पढ़ा गया।

होगा। इन वचनों तथा उस समय की वर्तमान परिस्थितियों के प्रसंगानुसार संविधान के मसौदे में कुछ उपबन्ध रखे गये थे, जिनके द्वारा कुछ महत्वपूर्ण बातों में राज्यों को प्रांतों से भिन्न आधार पर रखा गया था।

भारत सरकार द्वारा बरती गई राज्यों के एकीकरण करने और लोकतंत्रात्मक बनाने की नीति के फलस्वरूप दिसम्बर 1947 से तत्कथित राज्यों के 'संघीकरण' का कार्य बड़ी जोरों से हुआ। इस दिशा में दो महत्वपूर्ण प्रगतियां ये हुईं—राज्यों में डोमिनियन के विधायी प्राधिकार का विस्तार और राज्यों का फेडरल वित्तीय एकीकरण। केवल तीन विषयों के संबंध में प्रतिरक्षा, विदेशी विषय और यातायात के संबंध में राज्य आरम्भ में ही प्रवेश हो चुके हैं। संघों के निर्माण के साथ-साथ डोमिनियन संसद की विधायी शक्ति का विस्तार राज्यों के संघों में करारोपण के विषय को छोड़कर अन्य फेडरल और समवर्त्ती सूची में उल्लिखित सब विषयों तक कर दिया है। मैसूर राज्य के प्रवेश के विषय में भी इसी प्रकार विस्तार कर दिया गया था।

वित्तीय क्षेत्र की कमी को उस प्रबंध द्वारा पूरा कर दिया गया है जिसकी बातचीत राज्यों से देशी राज्यों की वित्तीय परिप्रश्न समिति द्वारा की गई सिफारिशों के आधार पर हुई थी। इस योजना का मूल आधार यह है कि राज्यों का फेडरल वित्तीय एकीकरण भारतीय संघ के नये संविधान में निहित इस आधारभूत विचारधारा के परिणामस्वरूप आवश्यक है कि प्रांत और राज्य समान हैं। अतः यह योजना निम्नलिखित बातों में प्रांतों और राज्यों में परस्पर पूर्ण समानता पर आश्रित है:–

(1) केन्द्रीय सरकार राज्यों में उन्हीं कृत्यों को करे और उन्हीं शक्तियों का प्रयोग करे जो प्रांतों में करती है।

(2) प्रांतों के समान राज्यों में केन्द्रीय सरकार अपने निजी कार्यपालक संघटनों द्वारा प्रकार्य करे।

(3) प्रांतों और राज्यों से केन्द्रीय साधनों के अंशदान के आधार में एकरूपता और समानता होनी चाहिये।

(4) केन्द्रीय सरकार द्वारा की जाने वाली साधारण सेवाओं के विषय में तथा विभाजनीय फेडरल कर, सहायक अनुदान, आर्थिक सहायता और अन्य सब प्रकार की वित्तीय तथा प्रौद्योगिक सहायता में प्रांतों और राज्यों में परस्पर समानता का व्यवहार होना चाहिये।

यह तथ्य कि हमारी कर संबंधी व्यवस्था में ये दूर तक प्रभाव डालने वाले परिवर्तन राज्यों की पूर्ण स्वीकृति से पुरःस्थापित किया जा रहे हैं स्वयं उस महान कार्य का सुपरिचायक है जिसको श्री वी.टी. कृष्णमाचारी की अध्यक्षता में देशी राज्यों की वित्तीय परिप्रश्न समिति ने किया है और जिसमें अध्यक्ष महोदय ने इस महत्वपूर्ण समस्या पर देशी राज्यों में के अपने महान अनुभव द्वारा कार्य किया।

[माननीय सरदार वल्लभभाई जे. पटेल]

इन महत्वपूर्ण प्रगतियों के कारण नये संविधान के अधीन हम राज्यों की स्थिति का पुनरीक्षण कर सकें और अतीत से विरासत के रूप में नये संविधान में जो असमानतायें और विभिन्नतायें आ गई थीं उनके समस्त अवशेषों को इस संविधान से दूर कर सकें।

राज्यों के विभिन्न संघों की स्थापना करने वाली प्रसंविदायें जब की गईं तो यह सोचा गया कि विभिन्न संघों का संविधान प्रसंविदाओं तथा भारत के संविधान के अनुसार अपनी-अपनी संविधान सभाओं द्वारा बनाया जाएगा। प्रसंविदाओं में ये उपबन्ध उस समय किये गये थे जब कि हम इस सिद्धांत के अनुसार कार्य कर रहे थे कि भारत की संविधान सभा को राज्यों के लिये संविधान बनाने का प्राधिकार देना राज्यों की स्वायत्तता का हरण करना होगा। परन्तु जैसे-जैसे राज्य केन्द्र के निकटतर आने लगे यह अनुभव किया गया कि भारतीय संघ के विभिन्न संविधानिक एककों के लिये पृथक-पृथक संविधानों का विचार शासकों की शासन विधि से प्राप्त किया गया विचार है और जन शासन व्यवस्था में भिन्न-भिन्न प्रकार के संविधानिक नमूनों के लिये गुंजाइश नहीं है। अतः हमने इस विषय पर विभिन्न संघों के मुख्य मंत्रियों से वाद विवाद किया और उनकी सम्मति से यह निश्चय किया कि राज्यों का संविधान भी भारत संविधान का प्रमुख अंग बने। इस प्रक्रिया को उन तीन राज्यों के विधान मंडलों ने, जिनमें इस समय ऐसे निकाय कार्य कर रहे हैं अर्थात् मैसूर, तिरुवांकुर तथा कोचीन संघ और सौराष्ट्र के विधान मंडलों ने जिस शीघ्रता के साथ स्वीकार किया वह राज्यों की जनता की अतीत की पृथकवाद की प्रवृत्ति को मिटाने की इच्छा का प्रमाण है।

इन महत्वपूर्ण प्रगतियों के कारण संविधान के कई उपबन्धों का, जहां तक कि उनका राज्य से संबंध था, बदलना आवश्यक हो गया। जिन संशोधनों को हम प्रस्थापित कर रहे हैं उनका परीक्षण मैसूर, सौराष्ट्र और तिरुवांकुर तथा कोचीन संघ के संविधान निर्माणक निकायों ने कर लिया है। इन निकायों द्वारा प्रस्थापित किये गये कुछ रूप भेदों को सभा के समक्ष प्रस्तुत किये गये संशोधनों में सन्निहित कर लिया गया है। अन्य रूप भेदों को मैंने इन संविधान सभाओं के प्रतिनिधियों से वाद विवाद कर लेने के पश्चात् छोड़ दिया है।

मेरे लिये यह बड़े खेद का विषय है कि अन्य राज्यों या राज्यों के संघों की जनता की इच्छा उनके निर्वाचित प्रतिनिधियों द्वारा जान लेने की इसी प्रकार की प्रक्रिया का पालन करना हमारे लिये संभव न हो सका। दुर्भाग्यवश शेष राज्यों में न तो समुचित रूप से गठित विधान मंडल हैं और न भारत के संविधान के अन्तिम रूप में बन जाने से पूर्व उनमें विधान मंडल का गठन करना संभव हो सकता है। अतः हमारे पास और कोई चारा न था सिवा इसके कि जैसी स्थिति हो शासक या राजप्रमुख की स्वीकृति के आधार पर इन राज्यों में संविधान का प्रवर्त्तन कर दें और शासक या राजप्रमुख अपने-अपने मंत्रिपरिषदों से अवश्य परामर्श करेंगे। मुझे विश्वास है कि न तो वे माननीय सदस्य जो इस सभा में उन राज्यों का प्रतिनिधान कर रहे हैं और न राज्यों की जनता सामान्यतया यह चाहेगी कि जब तक इन राज्यों में विधान मंडलों या संविधान निर्माणक निकायों का गठन न हो तब तक संविधान का प्रवर्त्तन इन राज्यों में स्थगित रखा जाये। नये संविधान के अधीन जब इन राज्यों के विधान मंडल बन जायेंगे तो वे संविधान में संशोधन प्रस्थापित कर

सकते हैं। इन राज्यों की जनता को मैं यह आश्वासन देना चाहता हूं कि उनके प्रथम विधान मंडलों द्वारा की गई किसी सिफारिश पर हम ठीक-ठीक विचार करेंगे। मुझे इसमें कोई संदेह नहीं है कि इस काल में इस सभा द्वारा बनाया गया संविधान, जिसमें सिवा एक राज्य के सबका समुचित प्रतिनिधित्व है, उनको स्वीकार्य होगा।

उन विशेष समस्याओं को ध्यान में रखते हुए जिनका सामना जम्मू और काश्मीर के राज्य को करना पड़ रहा है हमने वर्तमान आधार पर उस राज्य के संविधानिक संबंध को संघ के साथ बनाये रखने के लिये एक विशेष उपबन्ध बनाया है। हैदराबाद राज्य के विषय में इस संविधान की स्वीकृति राज्य की जनता के अनुसमर्थन पर आश्रित है।

जैसा कि सभा ने ध्यान दिया होगा जिस रूप में यह संविधान बन रहा है वह कई बातों में मूल मसौदे से भिन्न है। हमने 224 और 225 जैसे अनुच्छेदों को अपमार्जित कर दिया है जो फेडरल क्षेत्र में राज्यों के प्रति संघ के विधायी और कार्यपालक प्राधिकार पर परिसीमायें आरोपित करते थे। इसी प्रकार से विधायी सूची की उन प्रविष्टियों को छोड़ दिया गया है जो प्रांतों और राज्यों में अन्तर उत्पन्न करती थीं। अतः राज्यों के प्रति केन्द्र के विधायी और कार्यपालक के प्राधिकार वैसे ही होने चाहिये जैसे वे प्रांतों में तथा प्रांतों पर हैं। संक्रांति काल में कुछ समायोजनों के अधीन राज्यों का केन्द्र से राजस्व संबंध भी वही होगा जो प्रांतों और केन्द्र में है। अब उच्चतम न्यायालय का क्षेत्राधिकार राज्यों में उसी सीमा तक विस्तृत होगा जिस तक कि वह प्रांतों में है। राज्यों की उच्च न्यायालयों का गठन होगा और वे उसी प्रकार से प्रकार्य करेंगी जैसे कि प्रांतीय उच्च न्यायालय। भारत के समस्त नागरिक, चाहे वे राज्यों में निवास करते हों अथवा प्रांतों में, एक जैसे मूलाधिकारों का उपयोग करेंगे और उनके प्रवर्तन के लिये एक जैसे वैध उपचार होंगे। केन्द्र से संविधानिक संबंध और अपनी आंतरिक व्यवस्था के विषय में राज्य प्रांतों के समान होंगे।

मुझे विश्वास है कि सभा इस महत्वपूर्ण तथ्य पर कृतज्ञतापूर्वक ध्यान देगी कि 1935 की योजना से भिन्न रूप में हमारा संविधान लोकतंत्रों और राजकुलों का मेल नहीं है वरन् जनता की संपूर्ण प्रभुता की आधारभूत विचारधारा पर निर्मित भारतीय जनता का एक वास्तविक संघ है। यह राज्य और प्रांतों की जनता में की समस्त रुकावटों को दूर करता है और समान रूप से प्रांतों और राज्यों की जनता की ओर से किये गये सहयोगी उद्यम के सच्चे आधार पर निर्मित एक सुदृढ़ लोकतंत्रात्मक भारत बनाने के लक्ष्य की प्रथम बार पूर्ति करता है।

चूंकि सभा राज्यों पर प्रभाव डालने वाली प्रगतियों से परिचित है इस कारण जो विभिन्न संशोधन सभा के समक्ष प्रस्तुत किये गये हैं उनका सभा में व्याख्या करना मेरे लिये आवश्यक नहीं है। दो या तीन विषय ऐसे हैं जिन पर मैं कुछ बातें कहना चाहूंगा।

उनमें से एक प्रस्थापित अनुच्छेद 306-ख है। जैसा कि सभा को विदित है जिस रूप में हमें देशी राज्य मिले हैं उनमें प्रगति की स्थिति भिन्न-भिन्न रूप में थी। कई राज्यों में विशुद्ध रूप के स्वैरतंत्र से प्रारम्भ करना पड़ा। संक्रांति काल में जिस कार्य से संघों की सरकारें भयभीत थीं उस कार्य की विशालता पर ध्यान देते हुए और इस तथ्य पर ध्यान देते हुए कि न तो उन राज्यों में प्राप्त हुई सेवायें

[माननीय सरदार वल्लभभाई जे. पटेल]

और न राजनैतिक संघटन, जिस रूप में कि वे वहां वर्तमान थे, इस स्थिति में थे कि वे प्रशासन के उत्तरदायित्व को बिना सहायता के वहन कर सकें, हमने कुछ प्रसंविदाओं में यह उपबन्ध किया कि जब तक इन संघों में नया संविधान प्रवृत न हो तब तक अपने प्रकार्यों के प्रयोग करने में राजप्रमुख और मंत्री परिषद् भारत सरकार के साधारण नियंत्रण में रहेंगे और भारत सरकार द्वारा समय-समय पर निकाले गये अनुदेशों का पालन करते रहेंगे। संक्रांति कालीन व्यवस्था संभवत: कुछ वर्षों तक रहे। हम स्वयं इस बात के प्रति उत्सुक हैं कि इन राज्यों की जनता अपने पूर्ण उत्तरदायित्व को वहन करे, फिर भी हम इस तथ्य की उपेक्षा नहीं कर सकते हैं कि अधिकांश राज्यों में प्रशासी संघटन और राजनैतिक संस्थायें तुलनात्मक रूप में बहुत कम उन्नत दशा में पाई जाती हैं और राज्यों के एकीकरण और स्वैरतंत्र के लोकतंत्र व्यवस्था पर आने से संबंध रखने वाली समस्यायें ऐसी हैं कि वे चिरकाल से स्थापित प्रशासन व्यवस्थाओं और जनता के अनुभवी नेताओं के परखने की कसौटी है। अत: हमने यह आवश्यक समझा कि इन राज्यों में लोकतंत्रात्मक संस्थाओं की उन्नति के हित में, जो कि शासन दक्षता की आवश्यकता से किसी प्रकार कम नहीं हैं, भारत सरकार जब तक आवश्यक हो तब तक राज्यों की सरकारों पर अपना साधारण निरीक्षण रखे।

यह स्वाभाविक है कि कोई इस प्रकार का उपबन्ध, जिसमें भाग 3 में के राज्यों के साथ भाग 1 में के राज्यों से भिन्न प्रकार का व्यवहार है, कुछ भ्रम उत्पन्न करे। इन राज्यों के प्रतिनिधान करने वाले माननीय सदस्यों को और उनके द्वारा राज्यों की जनता को मैं यह आश्वासन देना चाहता हूं कि इन उपबन्धों में किसी सरकार की निन्दा नहीं है। उसमें केवल उन आकस्मिकताओं के लिये उपबन्ध है जिनकी वर्तमान दशाओं के कारण अन्य श्रेणियों के राज्यों की अपेक्षा भाग 3 में के राज्यों में उत्पन्न होने की अधिक संभावना है। हम किसी भी राज्य के दिन प्रति दिन के शासन में हस्तक्षेप करना नहीं चाहते हैं। हम स्वयं इस बात के लिये बहुत उत्सुक हैं कि राज्य की जनता अनुभव द्वारा सीखे। कड़े उपचार के साधनों को टालने के लिये यह अनुच्छेद मुख्यतया एक प्रकार का रक्षामूलक यंत्र है जैसे कि संविधानिक यंत्र के जर्जरित हो जाने के लिये उपबन्ध हैं। यह बिल्कुल स्पष्ट है कि इस विषय में मैसूर और तिरुवांकुर तथा कोचीन संघ के साथ जहां लोकतंत्रात्मक संस्थायें एक अरसे से कार्य कर रही हैं और जहां विधान मंडलों के प्रति उत्तरदायित्वपूर्ण सरकारें पदस्थ हैं, उन राज्यों से भिन्न व्यवहार करना पड़ा जो इस स्तर पर नहीं हैं। इन सब विषयों में प्रत्येक विषय की आवश्यकता के अनुसार हमारा नियंत्रण भिन्न-भिन्न सीमा तक प्रयोग में लाया जायेगा। प्रत्येक विषय को गुणावगुण के आधार पर निपटाने के लिये आवश्यक स्वविवेक इस अनुच्छेद का परन्तुक हमको प्रदान करता है।

मैं आशा करता हूं कि यह कथन, जिसमें हमारी समझी बूझी हुई नीति निहित हैं, किसी भी ऐसी शंका को दूर कर देगा जो इन राज्यों की सरकारों को इस अनुच्छेद के संबंध में हुई हो।

एक और विषय जिसके बारे में संदेह दूर करना चाहूंगा वह अनुच्छेद 3 पर प्रस्थापित संशोधन है। प्रादेशिक पुनर्समायोजन के संबंध में यह संशोधन भाग 3 में के राज्यों को उसी आधार पर रखता है जिस पर भाग 1 में के राज्य हैं। मैसूर

की संविधान सभा ने हमसे यह सिफारिश की थी कि सभा द्वारा जो अनुच्छेद स्वीकार कर लिया गया है और जिसमें यह उपबन्ध है कि भाग 3 के राज्यों के राज्यक्षेत्र पर प्रभाव डालने वाली प्रस्थापनाओं को सभा में रखने से पूर्व भाग 3 में के राज्यों की पूर्व स्वीकृति होनी चाहिये ये उपबन्ध ज्यों के त्यों रहें। हम इस कारण इस सुझाव से सहमत न हो सके कि ऐसे विषयों में भाग 1 और भाग 3 के राज्यों में अन्तर नहीं होना चाहिये। फिर भी मैं इस अवसर पर मैसूर राज्य के प्रतिनिधियों को यह आश्वासन देता हूं कि चाहे अनुच्छेद में प्रभाव पड़ने वाले राज्य के विधान मंडल से परामर्श करने या उसकी अनुमति लेने का उपबन्ध हो या न हो परन्तु जनता की इच्छा की उपेक्षा केन्द्रीय सरकार या विधान मंडल द्वारा नहीं हो सकती है। आखिर हमारे यहां लोकतंत्र है, हमें जनता की इच्छा का मुख्य बल है और लोक मत के विरुद्ध हम कार्य नहीं कर सकते हैं।

अब मैं प्रस्थापित अनुच्छेद 267-क पर आता हूं जिसके सम्बन्ध में कुछ व्याख्या आवश्यक है। जो राज्य विलीन कर लिये गये हैं तथा जिनका एकीकरण हो चुका है उनके शासकों को भिन्न-भिन्न प्रसंविदाओं तथा समाविष्टियों के करारों में नियत की गई निजी थैली देने की भारत सरकार ने प्रत्याभूति की है। अनुच्छेद 267-क इन प्रत्याभूतियों को संविधानिक रूप में अभिज्ञात करता है और उन रकमों के सम्बन्ध में प्रान्तों और राज्यों से समय-समय पर की गई उन प्राप्तियों के अधीन इस व्यय को केन्द्रीय राजस्व पर भारित करने के लिये उपबन्ध करता है।

सर्वप्रथम मैं इन प्रबन्धों के वित्तीय रूप को लूंगा। विगत समय में अधिकांश राज्यों में शासन पर किये जाने वाले और शासक की निजी शैली पर किये जाने वाले व्यय में कोई अन्तर न था। जहां शासकों की निजी थैली नियत भी की जा चुकी थी वहां भी इस बात के सुनिश्चियन के लिये कोई प्रभावी कदम नहीं उठाया जाता था कि जिस व्यय की निजी थैली द्वारा किये जाने की आशा है वह परोक्ष या प्रत्यक्ष रूप से राज्य के राजस्व पर तो भारित नहीं होता है। इस प्रकार शासक और शासन करने वाले परिवारों के सदस्यों पर बृहद् राशियां व्यय की जाती थीं। यह अनुमान लगाया गया है कि यह व्यय बीस करोड़ रुपये प्रति वर्ष से भी अधिक होता था।

समाविष्टियों के सब करारों और प्रसंविदाओं में शासक की निजी थैली को नियत कर देने की अब व्यवस्था है और उसके अन्तर्गत शासकों के निवासगृहों के व्यय, विवाहों तथा अन्य उत्सवों के व्यय इत्यादि के सहित शासकों और उनके परिवारों के समस्त व्यय आ जाते हैं। जिस निजी थैली की इन करारों के अधीन प्रत्याभूति की गई है वह दक्षिण के लिये उस प्रतिशत से कम है जो डॉ. राजेन्द्र प्रसाद, श्री शंकरराव देव और डॉ. पट्टाभि सीतारमैया द्वारा दिये गये पंचाट के अधीन है। उसका हिसाब राज्य के औसत वार्षिक राजस्व के प्रथम लाख पर 15 प्रतिशत इसके बाद चार लाख पर दस प्रतिशत और पांच लाख से ऊपर पर साढ़े सात प्रतिशत तथा अधिकतम 10 लाख लगाया गया है। केवल कुछ बड़े राज्यों के उन शासकों के लिये दस लाख की अधिकतम संख्या से आगे बढ़ गये हैं जिनके जीवन आधार के लिये ऐसा अनुभव किया गया और ऐसे राज्यों के शासकों के केवल जीवन काल तक ही वह देय है। अब तक जो वचन दिये गये हैं उनके अनुसार निजी थैली की कुल वार्षिक रकम लगभग साढ़े चार करोड़ होती है।

[माननीय सरदार वल्लभभाई जे. पटेल]

कुछ शासकों को उनके जीवनकाल के लिय प्रत्याभूति की गई राशि को बाद में जब फिर से नियत किया जायेगा तो निजी थैली का कुछ वार्षिक व्यय चार करोड़ रुपये से कुछ कम हो जायेगा।

प्रसंविदाओं और करारों के निबन्धनों के अधीन, जो शासकों द्वारा किये गये हैं, शासकों को सम्बद्ध राज्यों के आगमों में से निजी थैली देय है और इसी के अनुसार अब तक ये राशियां दी गई हैं भारतीय राज्यों की वित्तीय परिप्रश्न समिति से वाद विवाद करते समय अधिकांश राज्यों द्वारा इस बात पर जोर दिया गया था कि शासकों को निजी थैली की राशि देने का दायित्व इस आधार पर केन्द्र को ले लेना चाहिये कि–

(क) निजी थैली केन्द्र द्वारा नियत की गई है;

(ख) निजी थैली का रूप राजनैतिक है; तथा

(ग) ऐसी राशियां प्रान्तों द्वारा नहीं दी जाती हैं।

इन विचारों के अतिरिक्त प्रसंविदाओं के प्रवर्त्तन में आने के समय से स्थिति वास्तव में बदल गई है। सर्वप्रथम जहां तक समाविष्ट हुये राज्यों का सम्बन्ध है भारत के नये संविधान के अधीन उनके पूर्ण रूप से मिट जाने से उन राज्यों के शासकों को प्रत्याभूति निजी थैली देने के दायित्व के आधार में इस कारण परिवर्तन होगा कि जिन राज्यों के राजस्वों से निजी थैली देय है वे नहीं रहेंगे। दूसरी बात यह है कि "राज्य के राजस्व" पद पर अब राज्यों के फेडरल वित्तीय एकीकरण के प्रसंगानुसार ध्यान देना होगा। इस एकीकरण में दो बातें निहित हैं; एक वर्तमान पृथक् राज्य सरकारों का "कृत्यकारी" विभाजन और दूसरा राज्य की सरकारों विभाजित "फेडरल" भागों की वर्तमान केन्द्रीय सरकार से "समाविष्टि"। अत: यह परिणाम निकलता है कि जब फेडरल वित्तीय एकीकरण प्रभावी हो जाता है तो निजी थैली की राशि देने के दायित्व को सच कहिये तो समाविष्ट हुये और एकीकरण में लाये गये राज्यों के कृत्यकारी उत्तराधिकारियों द्वारा उचित रूप में बांट लेना चाहिये अर्थात् केन्द्रीय सरकार और प्रान्तों तथा राज्यों की सरकारों में। इन सब बातों पर ध्यान देते हुये हमने यह निश्चय किया है कि सर्वोत्तम उपाय यही होगा कि इन देयों का भार केन्द्रीय राजस्व पर रहे परन्तु साथ ही साथ ऐसे संक्रांति काल के लिये और ऐसी राशि के रूप में जिसे समुचित समझा जाये राज्यों की सरकारों से अंशदान प्राप्त करने के लिये उपबन्ध बना देना चाहिये। ये राशियां राज्यों के वित्तीय एकीकरण के लिये बनाई गई योजना के अनुसार प्राप्त की जायेंगी।

मैं यह कह चुका हूं कि हमने यह जो निजी थैली की व्यवस्था की है उससे शासकों पर का व्यय भार पहली संख्या से कम होकर एक चौथाई रह जायेगा। साथ ही साथ राज्यों को शासकों से प्राप्त हुये धन के रूप में एकीकरण की रीति से पर्याप्त लाभ हुआ है। उदाहरणार्थ केवल मध्य भारत के राजप्रमुख ने इतनी बड़ी धन राशि संघ को दी है कि उसका इतना ब्याज है कि वह उन सब शासकों की कुल निजी थैली की राशि के एक बड़े भाग को पूरा कर सकती है जो उस संघ में प्रविष्ट हुये हैं। जहां तक केन्द्र द्वारा इस भार के भाग को वहन

करने का सम्बन्ध है हमें यह याद रखना चाहिये कि यह प्रबन्ध राज्यों के वित्तीय एकीकरण के परिणाम स्वरूप है जिसका इस देश की अर्थ व्यवस्था पर स्थायी प्रभाव पड़ेगा। भारत आर्थिक एकीकरण भारत की आर्थिक व्यवस्था में की उन विघटनात्मक दरारों को पाट देगा जिनके कारण प्रान्तों में आर्थिक नीतियों का प्रभावी प्रवर्तन असम्भव हो गया था। उदाहरणार्थ केवल आयकर से बचने के विषय में ही, जो कि अभी कुछ वर्षों से एक गंभीर विषय बन गया है, फेडरल वित्तीय एकीकरण से लाभ बहुत ही सारवत् सिद्ध होगा। अतः वित्तीय दृष्टिकोण से, जो प्रबन्ध हमने किये हैं उनसे इस देश की आर्थिक व्यवस्था में बहुत लाभ होगा।

अब मैं इन प्रबन्धों के राजनैतिक तथा नैतिक रूप को लेता हूं। जिन देयों की हमने प्रत्याभूति की है उनको उनके सही स्वरूप में देखने के लिये हमें यह याद रखना होगा कि उनका सम्बन्ध उन महत्वपूर्ण प्रगतियों के साथ जोड़ा जाता है जो इस देश के अति महत्वपूर्ण हितों पर प्रभाव डालती है। ये प्रत्याभूतियां उन ऐतिहासिक निर्णयों का अंग हैं जिनमें भारत के भौगोलिक, राजनैतिक तथा आर्थिक, एकीकरण के महान आदर्श का लक्ष्य वर्तमान है—एक वह आदर्श जो शताब्दियों तक दूर का सपना ही बना रहा और जिसको भारतीय स्वाधीनता के पश्चात् भी प्राप्त करना उतना ही कठिन तथा जो अब भी उतना की सुदूरवर्त्ती होता है जितना पहले था।

यह प्रसिद्ध है कि मानव-स्मरण शक्ति अल्पकालीन है। अक्तूबर 1949 में एकत्रित होते हुये यह स्वाभाविक है कि हम उस समस्या को भूल गये हैं जिससे हम अगस्त 1947 में भयभीत थे। जैसा कि माननीय सदस्यों को विदित है कि तत्कथित अधिकार सम्बन्धी सर्वोच्च सत्ता का व्ययगत होना जून 3, 1947 को घोषित की गई योजना का अंग था जिसको कांग्रेस ने स्वीकार कर लिया था। इस प्रबन्ध से हम उसी प्रकार से सहमत हो गये थे जैसे हम भारत के विभाजन से सहमत हो गये थे। हमने इसे इस कारण स्वीकार किया था कि हमारे पास अन्य कोई चारा न था। यद्यपि ब्रिटिश सरकार की कई घोषणाओं में इस मूल तथ्य को अभिज्ञात किया गया था कि प्रत्येक राज्य उस डोमीनियन से अपने भावी सम्बन्ध स्थापित करे जिसके साथ वह भौगोलिक दृष्टि से एक है, परन्तु भारत स्वाधीनता अधिनियम ने राज्यों को उन सब आभारों से मुक्त कर दिया जो अंग्रेज़ी ताज के साथ थे। अंग्रेज़ वक्ताओं ने अपनी कई प्राधिकारयुक्त घोषणाओं में यह अभिज्ञात किया था कि सर्वोच्च सत्ता के व्ययगत होने पर पारिभाषिक तथा वैध रूप से राज्य स्वाधीन हो जायेंगे। उन्होंने यहां तक मान लिया था कि सैद्धान्तिक रूप से तो राज्य जिस डोमिनियन से चाहें उससे अपने भावी सम्बन्ध स्थापित करने के लिये स्वतन्त्र हैं—यद्यपि यह कहते हुये वे कुछ भौगोलिक विवशताओं का निर्देश अवश्य करते थे जिनको टाला नहीं जा सकता था। इस परिस्थिति में विघटनात्मक शक्तियों के प्रबल होने का वास्तव में भय था क्योंकि कुछ शासकों की स्वाधीनता घोषित करने के अपने पारिभाषिक अधिकारों को प्रयोग करने की इच्छा थी और कुछ की अपने पड़ौसी डोमिनियन से मिलने की इच्छा थी। यदि शासक अपने अधिकारों का इतनी अनुचित रीति से प्रयोग करते तो उनको इस देश के हित के विरोधी प्रभावशाली व्यक्तियों से यथेष्ट समर्थन प्राप्त होता।

[माननीय सरदार वल्लभभाई जे. पटेल]

इस अनुचित आधार के विरुद्ध भारत सरकार ने राज्यों के शासकों को प्रतिरक्षा, वैदेशिक कार्य और संचार इन तीन विषयों को दे देने के लिये निमंत्रित किया। जिस समय यह प्रस्थापना शासकों के सामने रखी गई थी उनको यह आश्वासन दिया गया था कि इन तीन विषयों के प्रवेशकरण के अतिरिक्त अन्य रूप में स्थिति पूर्ववत् रहेगी। उनको यह स्पष्ट कह दिया गया था कि इस प्रवेशकरण में राज्य पर कोई वित्तीय दायित्व की भावना नहीं है और यह भी कहा था कि राज्य की न तो आन्तरिक स्वायत्तता अथवा न प्रभुत्व को हरण करने का उद्देश्य ही है और न भारत के नये संविधान को मानने के सम्बन्ध में उनके स्वविवेक को ही शृंखलाबद्ध करना है। जब राज्य मंत्रालय ने शासकों से अपने-अपने राज्यों के एकीकरण के लिये सम्पर्क स्थापित किया था तो इन वचनों को ध्यान में रखना पड़ा था। शासकों को अपने-अपने राज्यों की सत्ता को विलीन करने के लिये विवश करने या प्रोत्साहित करने की कोई बात न थी। बल का किसी प्रकार का प्रयोग हमारे अपने स्वीकृत सिद्धान्तों के ही विरुद्ध न था वरन् उसका उलटा प्रभाव होता। यदि शासक बाहर रहना पसन्द करते तो वे उन भारी असैनिक सूचियों के अनुसार रुपया लेते रहते जैसे कि वे पहले लेते थे और अधिकतर वे राज्यों के राजस्व का अनिर्बन्धित रूप से उपयोग करते रहते। अपनी शासन शक्तियों को छोड़ने के लिये जैसे के तैसे रूप में जो कुछ हम न्यूनतम दे सकते थे वह यह था कि उनको निजी थैलियों की प्रत्याभूति दी जाये और युक्तियुक्त तथा पारिभाषित आधार पर उनको कुछ विशेषाधिकार दिये जायें। अत: निजी थैलियों का निर्णय शासकों द्वारा अपनी शासन शक्तियों को छोड़ने तथा पृथक् एककों के रूप में राज्यों के विघटन के कारण किया गया है। हमें यह याद रखना चाहिये कि अंग्रेजी सरकार ने केवल मरहटा राज्य के लिये बहुत बड़ी राशि व्यय की थी। हम स्वयं उन शासकों की निवृत्ति वेतनों के सम्बन्ध में अंग्रेज़ी सरकार के वचनों का सम्मान कर रहे हैं जिन्होंने उनके साम्राज्य की स्थापना में सहायता की थी। तो फिर क्या हमारे लिये यह आवश्यक है कि हम इस तुच्छ मूल्य पर आपत्ति करें—मैं जानबूझ कर तुच्छ शब्द का प्रयोग कर रहा हूं—जो हमने उस रक्तहीन क्रान्ति के एवज में दिया है जिसने हमारे करोड़ों लोगों के भाग्य पर प्रभाव डाला है।

यदि शासकों के साथ किया गया निर्णय परस्पर बातचीत के आधार को ग्रहण न करता तो इस समय शासकों की ओर से होने वाले कष्ट और दुष्टता की जितनी कल्पना की जा सकती है उससे कहीं अधिक सामर्थ्य उनमें होती। हमें उनके साथ न्याय करना चाहिये; हमें अपने आपको उनकी स्थिति में रखना चाहिये और उसके बाद उनके बलिदान का मूल्य आंकना चाहिये। समस्त शासन शक्तियों को हस्तान्तरण कर और अपने-अपने राज्यों के एकीकरण से सहमत हो कर शासकों ने अब अपने आभारों को पूरा कर दिया है। इन करारों के अधीन हमारे आभार का मुख्य भाग यह है कि यह विश्वास दिलायें कि निजी थैलियों के सम्बन्ध में जो प्रत्याभूति हमने दी है वह पूर्ण रूप से प्रवृत्त होगी। ऐसा न करना विश्वास का खोना होगा और नई व्यवस्था की स्थापना के लिये बहुत घातक होगा।

राज्यों के सम्बन्ध में इन कई उपबन्धों की सभा में सिफारिश करते हुये मैं माननीय सदस्यों से निवेदन करूंगा कि वे इन पर एक जटिल समस्या के एक

सामंजस्यपूर्ण निर्णय के रूप में सोचें। कोई विशेष उपबन्ध अपने प्रसंग से च्युत होने पर पूर्णतया भ्रमात्मक विचार उत्पन्न कर सकता है। कुछ लोग ऐसा दोष निकालें कि उनको यह पहली एकतंत्र व्यवस्था के समान प्रतीत हो। माननीय सदस्यों को मैं यह विश्वास कराना चाहता हूं कि राज्यों में से एकतंत्रवाद सदैव के लिये चला गया। किसी ऐसे विशेष निबन्धन से हमें उकता न जाना चाहिये जो हमें अतीत की याद दिलाता हो। जिस रूप में शासकों को भारत के नये संविधान में अभिज्ञात किया गया वह किसी प्रकार से राज्यों की लोकतन्त्रात्मक व्यवस्था को कोई हानि नहीं पहुंचाता है। शासक सम्मानपूर्वक छोड़कर चले गये हैं अब यह जनता का कर्तव्य है कि वह इस कमी को पूरा करे और नई व्यवस्था से पूर्ण लाभ उठाये।

सभा को मैं यह स्मरण कराने की धृष्टता करता हूं कि हरीपुरा सत्र में सन् 1938 में कांग्रेस ने राज्यों के प्रति अपने लक्ष्य की इस प्रकार परिभाषा की थी:–

> "कांग्रेस राज्यों में उसी राजनैतिक, सामाजिक और आर्थिक स्वातन्त्र्य की समर्थक है जैसी शेष भारत के लिये है और राज्यों को भारत का महत्वपूर्ण अंग समझती है जिसको पृथक् नहीं किया जा सकता है। पूर्ण स्वराज्य अथवा पूर्ण स्वाधीनता जो कि कांग्रेस का लक्ष्य है यह लक्ष्य समस्त भारत के लिये है जिसमें देशी राज्य भी सम्मिलित हैं क्योंकि भारत की अक्षुणता तथा एकता को जिस प्रकार पराधीनता में बनाये रखा गया था उसी प्रकार से स्वातन्त्र्य में भी बनाये रखना चाहिये। कांग्रेस को जो फेडरेशन स्वीकार्य हो सकता है वह फेडरेशन है जिसमें राज्य उस अंश तक लोकतंत्रात्मक स्वातंत्र्य का उपभोग करते हुये, जिस अंश तक शेष भारत उपभोग करेगा, एक स्वतन्त्र एकक के रूप में भाग लेगा।"

मुझे विश्वास है कि यदि मैं यह कहूं तो सभा मुझसे सहमत होगी कि इस समय जिन उपबन्धों को हम सभा के समक्ष प्रस्तुत कर रहे हैं उनमें इस लक्ष्य की पूर्ण प्राप्ति निहित है।

अध्यक्ष: संशोधन संख्या 217 जिसे डॉ. अम्बेडकर ने पेश किया है और इस पर जो विभिन्न संशोधन पेश हो चुके हैं उन पर अब हम आगे और वाद-विवाद करेंगे। यदि कोई सदस्य कुछ कहना चाहता है तो वह इस समय कह सकता है।

***डॉ. बी. पट्टाभि सीतारमैया** (मद्रास: जनरल): अध्यक्ष महोदय, पिछले अवसर पर जब कि मैं प्रथम बार इस सभा में बोला था मैंने यह कहा था कि यकायक मेरे मन में एक ऐसी प्रेरणा हुई कि वह मुझे ध्वनियंत्र के निकट ले आई। उसी बात को दुहराने की मैं अनुमति मांगता हूं।

ज्यों-ज्यों मैं एक पृष्ठ के बाद दूसरा पृष्ठ, एक कंडिका के बाद दूसरी कंडिका तथा एक वाक्य के पश्चात् दूसरा वाक्य उस प्रमाणबद्ध लेख्य का सुनता जा रहा था जो हमारे सामने अभी पढ़ा जा चुका है मुझे बड़ी प्रसन्नता होती थी और मैं एक नये स्वप्न संसार में पहुंच गया था—उस स्वप्न जगत में जो उस समय हमारी

[डॉ. बी. पट्टाभि सीतारमैया]

कल्पना में था जब कि हमने इस संकल्प के द्वारा हरीपुरा में समझौता किया था जिसको सौभाग्यवश अक्षरशः अभी पढ़कर सुनाया गया है। यह संकल्प उन दो वर्गों के परस्पर संघर्ष के परिणामस्वरूप था जिनमें एक वर्ग अधिक अनुदारवादी तथा दूसरा अधिक उग्रवादी था और अन्त में हमारे वर्तमान गृहमंत्री, प्रधान मंत्री और आदरणीय महात्मा जी ने दक्षतापूर्वक हस्तक्षेप कर इस संकल्प को प्रस्तुत किया था। 1936 में राज्य के विषयों में प्रत्यक्ष रूप से मैं रुचि रखने लगा क्योंकि मैंने सोचा कि भारत के प्रान्तों से इनको अब अधिक समय तक अलग नहीं रखा जा सकता है और जब कि मैंने एक राज्य से दूसरे राज्य की यात्रा की और हजारों मील मोटर में चला तो मैंने समझा कि राज्यों और प्रान्तों में कोई प्राकृतिक विभाजन नहीं है। वे न वन, न जंगल, न मरुस्थल, न नदियां और न पहाड़ी शृंखलाओं द्वारा पृथक् किये गये थे वरन् वे सब एक थे और दो क्षेत्रों में विभाजन रेखा केवल चुंगी का रस्से वाला द्वार था और यदि आप काठियावाड़ में होकर जायें जिसे अब सौराष्ट्र कहते हैं, जिसमें 417 राज्य हैं, तो आप राज्य से प्रान्त में या प्रान्त से राज्य में गये बिना दो मील की भी यात्रा नहीं कर सकते हैं। यह एक बड़ी अनहोनी सी बात थी। यह कल्पना भी नहीं की जा सकती थी कि इन राज्यों का किस प्रकार निर्माण हुआ और प्रान्तों और राज्यों को एक करने के विचार को स्थगित करने में कोई लाभ न था। इस प्रकार हरीपुरा में यह संकल्प बनाया गया था और आज हमें बड़ा संतोष है कि अपने गृहमंत्री की राजनीति और चातुरी से, जो राज्यों के मंत्री भी हैं, वित्तीय विषयों में, राजनैतिक विषयों में, सेना सम्बन्धी विषयों में और यहां तक कि संविधान के विषय में भी यह एकता आ गई।

बधाई के पात्र राज्यों के वे प्रतिनिधि हैं जो यहां एकत्रित हैं और जिन्होंने तुरन्त ही इन सुझावों को स्वीकार कर लिया। पहले ही फरवरी 1947 में जब हम बातचीत करने वाली समिति में लगे हुये थे मुझे ऐसा प्रतीत हुआ कि इस सभा में इन विभिन्न राज्यों के प्रतिनिधियों को लाना जादू टोने का काम होगा, परन्तु जब ये व्यक्ति जो शासकों के महलों के एक मील तक के घेरे में नहीं आ सकते थे वे बराबर के पद पर इन लोगों के साथ-साथ बैठे तो वह बड़ा ही आनन्ददायक दृश्य था और उस दिन से हम धीरे-धीरे उन्नति करते रहे और आज उनमें से 92 यहां हैं जो हम सबके साथ मित्र भाव से यहां बैठे हुये हैं।

मैं एक बात कहना चाहूंगा और वह निजी थैली के बारे में है। जब किसी दलदल की जगह महल बनाया जाता है जिसकी वजह से नींव कमजोर हो जाती है तो जितनी ईंटें दीवालों या उसके बाहरी भाग में दिखाई देती हैं उनसे अधिक ईंटें उस दलदल में डाल दी जाती हैं। ध्यान बाहरी भाग की ओर ही आकर्षित होता है, बाहरी भाग पर ही कलापूर्ण कार्य किया जाता है पर ईंटें उस नींव में डाली जाती हैं जो कहीं दिखाई नहीं देती परन्तु ऊपर जो भवन दिखाई देता है उसके भार को वे सदैव लादे रहती हैं। सोलह दक्षिणी राज्यों को एक संघ में लाने के प्रयत्न में हमने इसी नींव को रखा था और यह दूसरा अवसर है जब कि गृहमंत्री ने, जो राज्यों के मंत्री भी हैं, शासकों को जो निजी थैली दी गई है उसके उपक्रम के औचित्य के सम्बन्ध में हममें से तीन के नामों का स्पष्ट उल्लेख किया है। प्रारम्भिक कार्य हमने किया था और अपने शासकों को हमें कुछ

प्रलोभन भी देना था—हमें उनको संघ की योजना में लाना था। सारा सम्मान उन 16 शासकों के लिये है जो ऐसे समय में सर्वप्रथम संघ बनाने के लिये राजी हो गये जबकि न एकीकरण की और न संघीकरण की कल्पना तक थी। फालतन, सांगली भोर और औंध के शासक सम्मान के पात्र हैं जिन्होंने इस विषय का सूत्रपात किया और इस कार्य को एक ऐसी नींव पर सम्भव कर दिखाया जिसकी भली भांति सच्चाई के साथ स्थापना करनी थी और इस कारण उन पर अधिक रुपया खर्च करना पड़ा और उनको हमें अधिक निजी थैली देनी पड़ी। यह सौभाग्यपूर्ण विशेषाधिकार राज्य के मंत्री का था कि उन आधारों पर भवन खड़ा करे और अपेक्षाकृत बहुत कम मात्रा वाली निजी थैलियों को निश्चित करे और उसे न्यूनतम बनाने का सारा श्रेय हमारे राज्य के मंत्री को है।

शायद देश में एक एक ऐसी भावना है और कुछ मित्र जिनको राज्य के प्रशासन के सम्बन्ध में कोई अनुभव नहीं है वे अपने शासकों को निजी थैली दी गई हैं उनकी राशि के बारे में कुछ उपेक्षाकृत बातें कहते हैं। इस बात को स्पष्ट कर दिया जाये कि इनको मंजूर करने में कोई त्रुटि नहीं की गई है और ये बहुत ही कम परिमाण में मंजूर की गई हैं, और मुझे विश्वास है कि जैसे-जैसे समय व्यतीत होता चला जायेगा सम्भव है कि शासक स्वयं सोचने लगें कि इस प्रकार से जीवन की परवरिश करना उनके लिये उपयुक्त नहीं। शासक प्रशासन पर इतने भार स्वरूप नहीं हैं जितने जागीरदार हैं। हैदराबाद में 1200 जागीरदार हैं, ग्वालियर में 600। इन सबको मिटाना होगा और इन लोगों के लिये जितना प्रतिकर उचित है उस पर जब आप विचार करेंगे तो आपको विदित हो जायेगा कि आपने किस अनुपात में एकतंत्रवाद समाप्त किया है। आप अपनी निजी थैली के दायित्व तथा पोषणदायित्व की भी वृद्धि कर रहे हैं। यह अनिवार्य है। परन्तु जैसा कि इस लेख्य में भली भांति बता दिया गया है कि इसमें 20 करोड़ की वह बचत है जो कि अवैध भत्ते के रूप में लिये जाते रहे हैं और अनेक और करोड़ की बचत है जो वैध रूप से उन बजटों में से बचाये जा सकते हैं जिनका अब तक प्रचलन था। आखिर निजी थैली तो एक छोटा-सा विषय है। धन के रूप में यह शासकों के नैतिक त्याग के बराबर है। हम नैतिक त्याग ही तो चाहते हैं और यह सब श्रेय उन शासकों को है जो तुरन्त ही ऐसे प्रबन्ध के लिये सहमत हो गये। देश के साधनों में आप आसानी से वृद्धि कर सकते हैं। करार द्वारा आप आसानी से अपने व्यय कम कर सकते हैं। मैं अपनी ओर से मंत्रालय को बधाई देता हूं कि उन्होंने अपने उत्तरदायित्व को बड़े अच्छे ढंग से निभाया।

अन्त में मैं यह कहना चाहूंगा कि यद्यपि बहुत कुछ काम पूरा किया जा चुका है परन्तु फिर भी अभी कुछ करना शेष है। मैसूर और तिरुवांकुर के बाद मध्य भारत की बारी उस सुन्दर परम्परा के लिये है जो स्वयं बन रही है और राजस्थान को अभी इस दिशा में कार्य करना है। सौराष्ट्र बहुत दिनों तक एकाकी नहीं रह सकेगा, पेप्सू की अपनी समस्यायें हैं और हिमाचल राज्यों की भी समस्यायें हैं और अन्त में विन्ध्य प्रान्त है। मुझे विश्वास है कि वह राजनैतिक चातुर्य और दूरदर्शिता, वह विचारों की सूक्ष्मता और वह सूक्ष्म दृष्टि जिनके कारण ये फल प्राप्त हो सके हैं वह देश और राज्य मंत्रालय को इन चार समस्यावत् प्रश्नों के सम्बन्ध में भी वैसे ही सुन्दर परिणाम पर ले पहुंचेंगे।

[डॉ. बी. पट्टाभि सीतारमैया]

जब यह हो जायेगा तो समस्त भारत एक ही आधार पर होगा और हरिपुरा कांग्रेस के संकल्प में जिन कार्य सिद्धियों की कल्पना की गई थी वे पूर्ण हो जायेंगी। अत: केवल एक व्यक्ति के रूप में ही नहीं वरन् राज्यों की जनता के सम्मेलन के स्थायी अध्यक्ष के स्थानापन्न अध्यक्ष के रूप में, कार्यवाहक अध्यक्ष के रूप में और भारतीय राष्ट्रीय कांग्रेस के उस समय के उपराष्ट्रपति और इस समय राष्ट्रपति के रूप में मैं अपना धन्यवाद प्रकट करता हूं और बधाई देता हूं। मैं इस कथन का स्वागत करता हूं और इस सुन्दर महान कार्यसम्पादन के हेतु जिसकी मिसाल इतिहास में नहीं है माननीय राज्यों के मंत्री को बधाई देता हूं। मेरे सामने जर्मन राज्यों के संघ का दृश्य सरलता से प्रस्तुत हो सकता है जिसमें वे 1871 में जीना युद्ध के पश्चात् परस्पर संगठित हुये थे जब कि फ्रांस की हार हुई थी और सारा का सारा कोनफिडरेशन का रूप फेडरेशन में बदल गया था। स्वैरतंत्र के इन 502 टापुओं के—वैयक्तिक शासन के इन केन्द्रों के—संघीकरण के समान वह भी नहीं है जिनकी कि स्थापना अंग्रेजों ने अपने प्रयोजन के लिये की थी। अंग्रेज चले गये पर अपने जाने के बाद सर्वोच्च अधिकार सम्बन्धी 12 मई सन् 1946 के लेख्य का प्रकाशन कर वे अपने सुन्दर नाम में एक कलंक छोड़ गये, जिसको उन्होंने 23 मई 1946 तक प्रकाशित न होने दिया अर्थात् जब तक कि हम 16 मई के लेख्य का अपना उत्तर न दे दें जिस पर सारी बातचीतें हो रही थीं। एक कलम से उन्होंने इन 562 शेरों को पिंजड़ों से बाहर कर दिया और वे देश में भटकने लगे। सौभाग्यवश राज्यों के मंत्रालय ने उनको पकड़ लिया और उनको उपयोगी नागरिक बना लिया और हमें विश्वास है कि राजनय और उद्योग क्षेत्रों में—इन दो क्षेत्रों के लिये वे बड़े ही योग्य हैं—अपने सहयोग से वे राष्ट्रमंडल में भारत का नाम चमका देंगे।

***अध्यक्ष:** कुछ अधिक वक्ताओं को भाषण देने की आज्ञा देने में मुझे चिंता नहीं है पर मेरा यह सुझाव है कि इस भाग को हम आज समाप्त कर दें।

श्री राम सहाय (मध्य भारत): अध्यक्ष महोदय, आज रियासतों की जनता के लिये इससे ज्यादा खुशी का मौका नहीं हो सकता है कि वह अपने आपको प्रान्त की जनता के समान पाती है। विधान में उनको वही स्थान मिला हुआ है जो कि प्रान्तों की जनता को मिला है। इसमें कोई शुभा नहीं कि श्री सरदार ने स्टेट्स के सम्बन्ध में जो खासी दिलचस्पी ली है उसकी ही वजह से आज स्टेट्स की जनता को यह मौका मिला है। इसमें भी कोई शुभा नहीं कि कांग्रेस ने हरिपुरा कांग्रेस सेशन में जो रेजोल्यूशन रियासतों के सम्बन्ध में पास किया था उसके ही परिणाम स्वरूप आल इण्डिया स्टेट्स पीपल्स कांफ्रेंस की रीजनल कौंसिल ने अपने अपने रीजन में सारी स्टेट्स को एक स्थान पर लाने का प्रयत्न किया और उसकी वजह से जो वातावरण तैयार हुआ उससे श्री सरदार को काफी सहायता मिली और वह जल्द से जल्द इस कार्य को पूरा कर सके। आल इंडिया स्टेट पीपुल्स कान्फ्रेंस के मातहत कार्य करने वाले सब ही रीजनल कौंसिल ने इस बारे में भरसक प्रयत्न किया। उनके प्रयत्न के कारण तथा सरदार पटेल के नेतृत्व की वजह से आप लोग देख रहे हैं कि इस विधान में जो स्थान प्रान्तों का है वही स्टेट्स को मिल गया है। अभी पिछले साल कान्स्टिट्युएण्ट असेम्बली के स्टेटस के रिप्रेजेन्टेटिव्ज

का एक कन्वेन्शन यहां दिल्ली में हुआ था और उसने जो स्टेटमेंट इश्यू किया था उसमें भी यही चाहा गया था कि वह जल्द से जल्द विधान में इस किस्म की धारायें लाई जायें जिससे कि सब स्टेट्स और प्रान्त एक बराबर हो जाये। यही कारण था कि जिसकी वजह से स्टेट्स मिनिस्टरी ने पहले एक माडल कान्स्टीट्यूशन के लिये एक कमेटी बनाई और उसने मॉडल कान्स्टीट्यूशन तैयार किये लेकिन हालात इतनी जल्दी तब्दील हुये कि वह मॉडल कान्स्टीट्यूशन तो एक तरफ रहा, हम देख रहे हैं कि रियासतों की जनता को तथा प्रान्तों की जनता को एक ही अधिकार और एक ही जिम्मेदारी से काम करने का मौका मिल रहा है और मॉडल कान्स्टीट्यूशन बनाने वाली कमेटी की रिपोर्ट के मुताबिक ही यह चैपटर विधान में जोड़ा जा रहा है।

मैं एक बात और कहूं कि अब विधान में जो धारा 306-बी आ रही है उसके सम्बन्ध में कई तरह की बातें और बहुत-सी शंकायें स्टेट्स के लोगों के दिल में पैदा हुई थीं। हम कुछ लोग श्री सरदार से मिले भी। इस सम्बन्ध में श्री सरदार ने जो बातें हमसे कहीं उससे हमें काफी सन्तोष हुआ और हम समझते हैं कि हमारी जो शंकायें थीं वह लगभग दूर हो गईं, और उन्होंने जिस तरह से हमें समझाया, हमने समझा कि दरअसल सब की रियासतों की हालत को देखते हुए उसकी जरूरत है।

पहले रियासतें पोलिटिकल डिपार्टमेंट के अण्डर में काम करती थीं। अब स्टेट्स मिनिस्ट्री के अण्डर में काम करना होगा। लेकिन एक बड़ा फर्क है। पहले स्टेट्स का जो शासन चलता था, प्रायः वह फौरन रूल को काम रखने की दृष्टि से चलता था, लेकिन आज जो काम हमें स्टेट्स मिनिस्ट्री के अण्डर में करना होगा वह केवल इसलिये कि हम अपने ऐडमिनिस्ट्रेशन को जल्द से जल्द अच्छा और कामयाब बना सकें। हमको वही सब सहूलियतें वही सारे अधिकार जो प्रान्तों को हैं, मिल रहे हैं। तो फिर मैं समझता हूं कि इस बारे में हमें कोई शंका करने की जरूरत नहीं, और खास तौर पर सरदार ने जो स्टेटमेंट दिया है और हाउस के सामने उसमें जो कुछ उन्होंने बता दिया है और जो आश्वासन दिया है उसके बाद ऐसी कोई शंका करने की आवश्यकता नहीं प्रतीत होती है।

मध्य भारत में लेजिस्लेटिव असेम्बली है। ग्वालियर में तो वहां की असेम्बली 25-30 साल से काम कर रही थी, इन्दौर में भी करीब 15-20 साल से काम कर रही थी। अभी हाल में जो असेम्बली सारी रियासतों को मिला कर बनी है उसे अवश्य ही थोड़ा ही अर्सा हुआ है, लेकिन उसमें सारी स्टेट्स के जनता के रिप्रेजेन्टेटिव हैं, इस तरह से मध्य भारत की असेम्बली काम कर रही है और वह असेम्बली उस विधान से कार्य कर रही है जो उस असेम्बली ने स्वयं ही अपना तैयार किया है।

मैं समझता हूं कि अब जो कान्स्टीट्यूशन हम बना रहे हैं, उसके अनुसार हम बहुत जल्द से जल्द अपने आपको उसी प्रकार से शासन चलाते पायेंगे जैसे कि प्रान्त में शासन चलेगा।

***श्री ए. थानू पिल्लेः** अध्यक्ष महोदय, राज्य के मंत्रालय की और उस महान व्यक्ति की जिस पर इस समय इस मंत्रालय का भार है, प्रशंसा में मैं कुछ शब्द और जोड़ना चाहता हूं और उनको धन्यवाद देता हूं। श्रीमान, भारत सरकार और

[श्री ए. थानू पिल्ले]

देशी राज्यों के आपस में सम्बन्ध में जो परिवर्तन हुआ है वह और जिस शीघ्र गति से वह परिवर्तन हुआ है वह वास्तव में आश्चर्यजनक है। इस समय मैं केवल एक ही तथ्य का उल्लेख करूंगा। कुछ माह पूर्व यह आवश्यक समझा गया था कि राज्यों के लिये एक अनुकरणीय संविधान का मसौदा तैयार करने के लिये एक समिति नियुक्त की जाये। इससे यह आशय है कि उस समय तक भी यह विचार था कि देशी राज्यों को अपना पृथक् संविधान बनाना पड़ेगा। और अब हम ऐसी स्थिति को पहुंच गये हैं जहां कि मय राज्यों के समस्त भारत के लिये यही संविधान बनाने में हम समर्थ हैं, और वास्तव में यह एक ऐसी कार्यसिद्धि है जिसका किसी भी प्रशासक को किसी भी मंत्रालय को यथार्थ गौरव हो सकता है; और एक देशी राज्य के होने के नाते मुझे विशेषकर खुशी है कि इस परिवर्तन को देखने का मुझे अवसर मिला। और संविधान निर्माण में भाग लेने का अवसर मिला और भारत के समूचे संविधान के एक भाग के रूप में राज्यों के संविधान का निर्माण किया।

सफलता का यह सुन्दर अभिलेख राज्यों की जनता सहित हम सबके लिये प्रेरणा उत्पन्न करने वाला होना चाहिये। जैसा कि यहां बताया गया था राज्य प्रगति के भिन्न स्तर पर है। मुझे हर्ष है कि प्रान्त सम्बन्धी उपबन्धों को राज्यों के लिये प्रयोज्य बना दिया गया है। इस समूचे देश में जो राज्य सबसे आगे हैं उनका सबसे आगे होने का तथ्य यह है कि उन्होंने प्रान्तों में प्रचलित रीतियों को बहुत पहले से अपना लिया—मेरा आशय प्रशासी तथा विधायी रीतियों से है। यदि इस समय देशी राज्यों में मैसूर, तिरुवांकुर और कोचीन सबसे आगे है तो यह अधिकतर इस तथ्य के कारण है कि हमने प्रान्तों में प्रचलित प्रशासी तथा विधायी रीतियों को बहुत पहले से अपना लिया था। उत्तर के देशी राज्य पीछे रह गये क्योंकि वे पुरानी रीतियों पर अड़े रहे और उसका फल यह हुआ कि आज हम यह देखते हैं कि वे प्रत्यक्ष रूप से पिछड़े हुये हैं। अत: जब हम उसी प्रणाली को अंगीकार करते हैं, जब हम सब राज्यों और प्रान्तों के लिये एक प्रकार के उपबन्धों को स्वीकार करते हैं तो हम यह आशा कर सकते हैं कि जहां तक इन देशी राज्यों का सम्बन्ध है उन्नति शीघ्र होगी। हम इसी परिणाम की आशा करें।

श्रीमान, मैं एक या दो विषयों का उल्लेख करना और चाहता हूं जिनका यहां उल्लेख तो हो ही चुका है। अनुच्छेद 306-ख के सम्बन्ध में मैं पूर्णतया समझता हूं कि उस अनुच्छेद का क्यों पुर:स्थापन किया गया है। पर मैं इस तथ्य को भी प्रकट करना चाहूंगा कि कुछ राज्य भारतीय प्रान्तों के समकक्ष हैं और इन राज्यों के साथ प्रान्तों से भिन्न प्रकार के व्यवहार करने की न तो आवश्यकता है और न वह उचित ही होगा। हमारे सामने सरदार पटेल का जो भाषण पढ़ा गया था उससे हमें यह विदित होता है कि राज्यों के मंत्रालय का यह उद्देश्य है कि जहां तक हो सके राज्यों में उन्हीं प्रशासी तथा विधायी रीतियों का पुर:स्थापन किया जाये जो प्रान्तों में हैं और दोनों प्रशासी तथा विधायी विषयों में और केन्द्र द्वारा हस्तक्षेप के विषय में राज्यों के साथ भी उसी प्रकार का व्यवहार किया जाये जैसा प्रान्तों के साथ है। यदि ऐसी बात है तो मैं निवेदन करूंगा कि कम से कम उन राज्यों को जो इस समय भी प्रान्तों के बराबर हैं उनको इस संविधान में केन्द्रीय सरकार के नियंत्रण से अलग क्यों नहीं रखा जाता? मैं उस भावना से भली भांति परिचित हूं जिसके कारण संविधान के मसौदे में इस समय प्रस्थापित किये गये इस उपबन्ध

के पुर:स्थापित करने का प्रयास किया गया है और देशी राज्य से आये हुये प्रत्येक सदस्य को इसी रूप में इसे देखना चाहिये। परन्तु हमें परिस्थिति की आवश्यकता से परे नहीं जाना चाहिये। इस विषय के केवल कानूनी तथा संविधानिक पहल ही नहीं है; वरन इसमें भावना और आत्म सम्मान का प्रश्न भी निहित है। मैसूर और तिरुवांकुर और कोचीन के संघ के साथ मद्रास और बम्बई से भिन्न प्रकार का व्यवहार क्यों हो? यह प्रश्न अपने आप उठता है। ये राज्य उतने ही उन्नत हैं जितने कि कोई प्रान्त, तो फिर आप उनसे भिन्न प्रकार का व्यवहार क्यों करें? इसकी क्या आवश्यकता? मसौदा समिति कृपा कर मेरे इस सुझाव पर विचार करे और यदि कुछ राज्यों के लिये प्रस्थापित नियंत्रण आवश्यक समझा जाये तो मैसूर, तिरुवांकुर और कोचीन जैसे उन्नत राष्ट्रों को छोड़कर ऐसे राज्यों ही अनुसूची संविधान में सम्मिलित कर दी जाये। कार्यपालक आदेश द्वारा ऐसे राज्यों के अपवर्जन को राष्ट्रपति पर छोड़ना न्याययुक्त नहीं कहा जा सकता।

इसके बाद छोटा-सा विषय और है जिसे श्री सन्तानम् ने उठाया था और जिसका मैं उल्लेख करना चाहता हूं। उन्होंने यह सुझाव दिया था कि यद्यपि राजप्रमुख के परामर्श से राष्ट्रपति द्वारा राज्यों या राज्य संघों में के उच्च न्यायालय के न्यायाधीशों के वेतन नियत किये जा सकते हैं, पर उनके भत्ते और निवृत्ति वेतनों पर भिन्न प्रकार से विचार करना चाहिये और ये संसद द्वारा नियत होने चाहिये। निवृत्ति वेतनों के सम्बन्ध में मैं इस बात को समझ सकता हूं क्योंकि उच्च न्यायालय के न्यायाधीशों के निवृत्ति वेतन का भार भारत की संचित निधि पर होगा। यदि यह बात है तो संसद द्वारा निवृत्ति वेतन नियत किये जा सकते हैं। परन्तु यदि राजप्रमुख के परामर्श से राष्ट्रपति द्वारा राज्यों के उच्चन्यायालय के न्यायाधीशों के वेतन नियत करने की बात न्यायपूर्ण है तो इसी प्रकार से उनके भत्ते नियत किया जाना भी न्यायपूर्ण है। अत: मैं यह सुझाव दूंगा कि श्री सन्तानम् के प्रस्थापित संशोधन में यह रूपभेद कर दिया जाये कि वह संशोधन केवल निवृत्ति वेतन तक की निर्बन्धित रखा जाये और भत्तों पर उसी प्रकार से विचार किया जाये जैसे वेतनों पर।

इसके बाद श्रीमान, निजी थैली के सम्बन्ध में मुझे कुछ नहीं कहना है। मैं समझता हूं कि प्रस्थापित उपबन्ध उन सदस्यों को मान्य होंगे जो राज्यों से आये हैं।

अन्त में राज्यों की वित्तीय स्थिति के सम्बन्ध में इस सभा से तथा सरकार से एक निवेदन करना चाहूंगा। यह साधारण ज्ञान का विषय है कि फेडरल वित्तीय एकीकरण के कारण राज्यों को अपने वित्तीय साधनों में बहुत कुछ हानि उठानी पड़ेगी। राज्य जिस प्रकार से कुछ काल से अपना प्रशासन चलाते आ रहे हैं उसी प्रकार से चलाते रहने के लिये उपबन्ध करने का प्रयास किया जा रहा है और मैं आशा करता हूं कि भारत सरकार बहुत ही उदार होकर इस उपबन्ध को अमल में लायेगी। वास्तव में मुझे यह एक सच्ची प्रार्थना करनी चाहिये कि इस समस्या पर बड़ी उदारता तथा सहानुभूतिपूर्वक विचार हो। अन्यथा राज्यों का प्रशासन नहीं चल सकता। तिरुवांकुर और कोचीन का जहां तक सम्बन्ध है 10 से 12 करोड़ तक के कुल राजस्व में से हमें तीन या चार करोड़ की हानि होगी और जब तक यह कमी पूरी नहीं होगी तब तक हमारा प्रशासन कार्य नहीं चल सकता,

[श्री ए. थानू पिल्ले]

वह ठप हो जायेगा। मैं आशा करता हूं कि इस विषय पर केन्द्रीय सरकार ठीक-ठीक विचार करेगी।

फेडरल वित्तीय एकीकरण से जो वित्तीय समायोजन आवश्यक हो गये हैं उनके सम्बन्ध में केन्द्रीय सरकार और राज्य संघों में होने वाले करारों के लिये उपबन्ध बनाने का प्रयास किया जा रहा है। जिन विषयों के लिये करार करने होंगे उन सबके लिये उपबन्ध बनाने होंगे। राज्यों में से जिन शुल्कों का उत्पादन किया गया है उनके सम्बन्ध में केन्द्र द्वारा वापसी का उपबन्ध प्रस्थापित किया गया है। आयकर और अन्य राजस्व के साधनों में हानि हो जाने के कारण देशी राज्यों को वित्तीय सहायता देने के लिये किये जाने वाले करारों के लिये भी उपबन्ध बनाने चाहिये। मैं आशा रखता हूं कि संविधान में ये सब आवश्यक उपबन्ध रख दिये जायेंगे।

इन बातों के साथ सभा के समक्ष जो अनुच्छेद प्रस्तुत किया गया है मैं उसका समर्थन करता हूं।

***अध्यक्ष:** यह प्रार्थना की गई है कि राज्य सम्बन्धी इन अनुच्छेदों पर होने वाले इस वाद-विवाद में राज्य के कई सदस्य भाग लेना चाहते हैं। मेरे विचार से उनकी यह बड़ी ही युक्तियुक्त इच्छा है और उनको अवसर देने के लिये मैं उद्यत हूं। अत: मैं आजकल समूचे विषय पर मत नहीं लूंगा। हम कल वाद-विवाद जारी रख सकते हैं। पर एक सुझाव है जिसको मैं रखना चाहूंगा। ऐसी दशा में हम अन्य संशोधनों को भी सभा के समक्ष प्रस्तुत कराना चाहेंगे जिससे कि इस समूची बात को अन्त में एक ही बार में लिया जा सके और यह तभी होगा जबकि सारे संशोधन सभा के समक्ष हों।

(श्रीमती ऐनी मेस्करीन भाषण देने के लिये उठीं)

***अध्यक्ष:** यदि आप थोड़े से समय में भाषण समाप्त कर दें, तब तो इस समय मैं आपको भाषण देने की आज्ञा दे सकता हूं।

***श्रीमती ऐनी मेस्करीन** (तिरुवांकुर और कोचीन संघ): अध्यक्ष महोदय, सरदार साहब का भाषण सुनने के बाद मुझे ऐसा अनुभव हुआ कि राज्यों के सम्बन्ध में मेरी सारी कठिनाइयां दूर हो गईं। जबसे मैंने धारा 306-ख को पढ़ा था तभी से उससे मुझे कुछ अशान्ति सी रही थी और मेरा यह विचार हुआ था कि लोकतन्त्रात्मक भारत के निर्माण में बहुत समय तक ये राज्य रोमन जैसे रक्षाकवच के अधीन रहेंगे। तिरुवांकुर, कोचीन और मैसूर बल्कि वास्तविक रूप में दक्षिण भारत के राज्य ऐसे क्षेत्र थे जिनमें लोकतंत्र का सर्वप्रथम प्रवेश हुआ। मैं स्वयं अपनी प्रशंसा नहीं कर रही हूं पर मैं इस सभा को यह सूचना दूंगी—मैं समझती हूं कि सदस्य इस बात को जानते होंगे—कि वयस्क मताधिकार का सर्व प्रथम पुर:स्थापन भारत में तिरुवांकुर ने किया और लोकतन्त्रात्मक सिद्धान्तों को तिरुवांकुर और कोचीन ने उस समय ही पुर:स्थापित कर दिया था जब कि अन्य कोई प्रान्त इस विषय का विचार तक नहीं रखता था। जब अनुच्छेद 306-ख पुर:स्थापित किया

गया तो हमने सोचा कि क्या राज्य के मंत्रालय द्वारा हीन भावना से हमको छोड़ दिया जायेगा? हमारे समझने के लिये भारत के बिस्मार्क का यह ज्ञान बड़ा गहरा था। उन्होंने लोकतन्त्रात्मक भारत के भाग्य को इस प्रकार ढाला है कि जो राज्य यथेष्ठ रूप से उन्नत हैं वे प्रान्तों के बराबर हैं, और जिन राज्यों को एतत्पश्चात् उन्नति करनी है उनको एक रक्षक यंत्र दे दिया गया है जिससे कि वे निर्भय होकर उन्नति कर सकें।

एक बात मुझे बड़े महत्व की लगती है और वह है शक्ति का केन्द्रीयकरण। शक्ति के दृढ़ केन्द्रीयकरण के बिना कोई राष्ट्र, कोई साम्राज्य संसार में जीवित नहीं रहा। बिस्मार्क द्वारा बनाये गये रूप में जर्मनी के कोन्फीडरेशन को आज यूरोप के मानचित्र में वह विषम स्थान प्राप्त है कि उसके विभाजन करना यूरोप के प्रशासकों के लिये एक समस्या है। ग्रीस में वेनेजलोस और चीन में सुनयातसेन के उदाहरण हमें यह विश्वास दिलाने के लिये पर्याप्त हैं कि भारत का यह बिस्मार्क एक ऐसा प्रशासक है जिसकी बुद्धि और अनुभव की उपमा नहीं। विगत दो महीनों में राज्य मंत्रालय ने जो कार्य किया है उसके लिये राज्यों की जनता मंत्रालय के प्रति बहुत आभारी है। अब वह यह अनुभव करने लगी है कि जिस स्वैरतंत्र ने उन्हें अंग्रेजी शासन में दबाकर रखा था उससे अब आगे अधिक कष्ट नहीं होगा। भारत का 40 प्रतिशत राज्यक्षेत्र और 23 प्रतिशत जनसंख्या अब प्रान्त और प्रान्त की जनता के बराबर है और लोकतन्त्रात्मक भारत का भाग्य अब इतना आशाजनक दिखाई देता है कि थोड़े से काल में हम संसार के अग्रतम लोकतंत्रों में गिने जायेंगे। हमें स्वयं अपने आपको बधाई देनी चाहिये कि संसार के इतिहास में यह प्रथम अवसर है जब कि 40 करोड़ जनता ने स्वराज रूपी समुद्र में अपना बेड़ा खोला है और संसार के इतिहास में यह एक सर्वोत्तम उदाहरण प्रस्तुत करने जा रहा है। मैं एक बार और राज्य के मंत्रालय को धन्यवाद देती हूं और कम उन्नति वाले राज्यों की जनता से निवेदन करती हूं कि वे इस अवसर से पूरा-पूरा लाभ उठायें और शीघ्र ही प्रान्तों के बराबर आ जायें जिससे कि आगामी वर्ष में हमारे लोकतन्त्रात्मक भारत में कोई राज्य न रहे केवल प्रांत रहें।

इसके पश्चात् सभा बृहस्पतिवार ता. 13 अक्तूबर, 1949 के दस बजे तक के लिये स्थगित हो गई।

———————

GIPD–HS-214 PSdeb–11-11-52–320